• वर्ष ६६ • अंक १९ • मूल्य ₹ २०

अक्टूबर (प्रथम) २०२४

पाक्षिक

परोपकारी

महर्षि दयानन्द सरस्वती

वैदिक धर्म के निष्कम्प अनुगामी,
आर्ष सिद्धान्तों के निष्ठावान प्रचारक-प्रसारक,
महर्षि के अनन्य भक्त, परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान, कीर्तिशेष

आचार्य डॉ. धर्मवीर जी

६ अक्टूबर जिनकी पुण्यतिथि है !
सादर स्मरण !

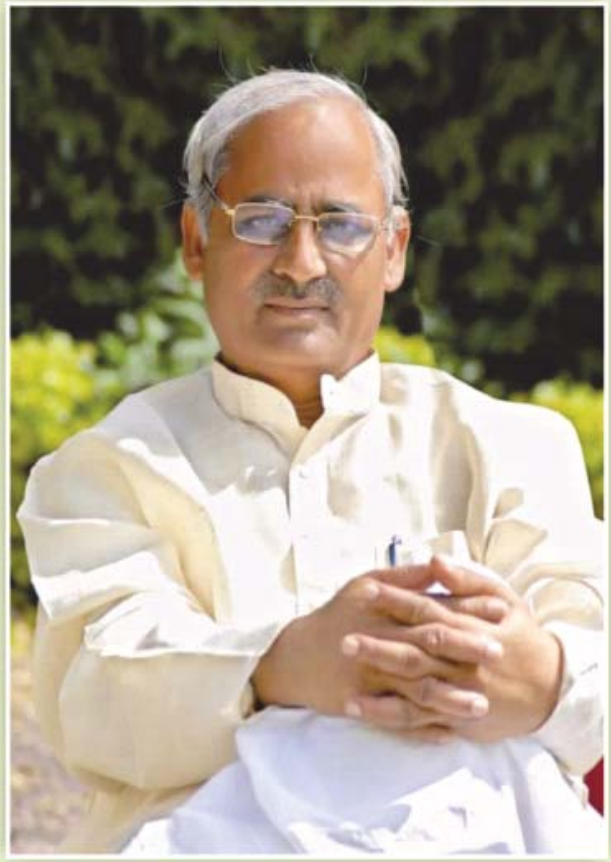

हे महामनस्वी महाप्रज्ञ, हे दयानन्द के अग्रदूत।
हे ज्ञानपुंज हे शान्तिकाम, हे वेदमात के कुल सपूत।।
हे क्रान्तद्रष्ट हे धर्मधुनी, धर्मधुरीय धर्मप्रवीण।
हे वेदमार्ग के सजग पथिक, सुधि रहे आपकी चिर नवीन

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६६ अंक : १९

दयानन्दाब्द: २००

विक्रम संवत् - आश्विन कृष्ण २०८१

कलि संवत् - ५१२५

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२५

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

मुद्रक- डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
८२०९५८६१६६

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अक्टूबर प्रथम, २०२४

अनुक्रम

०१. आओ चलो! अजमेर चलें!!	सम्पादकीय	०४
०२. प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान...	डॉ. सुरेन्द्र कुमार	०५
* प्रवेश सूचना		०९
०३. आर्यसमाज के प्रामाणिक इतिहास...	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. स्वामी करपात्री जी-वेदार्थ...	डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री	१४
०५. निवेदन		१८
०६. ज्ञान सूक्त-१९	डॉ. धर्मवीर	१९
०७. वैदिक युग के स्वप्नद्रष्टा महर्षि...	रामनिवास 'गुणग्राहक'	२२
०८. स्वामी दयानंद की दृष्टि में समाज...	डॉ श्वेत केतु शर्मा	२६
* नवीन प्रकाशन पर ५० प्रतिशत की विशेष छूट		२८
०९. धैर्य धर्म का पहला लक्षण...	डॉ. रामवीर	२९
* आचार्य की आवश्यकता		२९
१०. दुकान (स्टॉल) आवंटन		३०
११. भव्य एवं दिव्य ऋषि मेला समारोह		३२
१२.संस्था की ओर से....		३३
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

आओ चलो! अजमेर चलें!!

मनुष्य अपने आस्था केन्द्रों की यात्रा करते ही रहते हैं। इन यात्राओं का उद्देश्य जीवन में ऊर्जा का संचरण करना है। बिना किसी भेदभाव के मनुष्य मात्र के कल्याणर्थ स्वजीवन को हुत करने वाले महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन से विशेष रूप से सम्बद्ध स्थान भी महर्षि भक्तों के प्रेरणा स्थल हैं। यद्यपि महर्षि ईंट-पत्थर से निर्मित स्मारक के समर्थक नहीं थे, किन्तु महर्षि की निर्वाण स्थली अजमेर तथा स्वयं महर्षि द्वारा अपनी उत्तराधिकारिणी सभा के रूप में स्थापित परोपकारिणी सभा का प्रेरक स्थल के रूप में विशिष्ट स्थान है।

परोपकारिणी सभा महर्षि के वेदभाष्य, सत्यार्थप्रकाश आदि सभी ग्रन्थों का प्रकाशन करती है। महर्षि ग्रन्थों के साथ ही सभा ने महर्षि के पत्र-व्यवहार को भी सुव्यवस्थित कर प्रकाशित किया है। महर्षि के हस्तलेख भी सभा के पास पूर्णत: सुरक्षित हैं। महर्षि के व्यक्तिगत उपयोग की कुछ सामग्री (कमण्डलु, खडाऊं, दुशाला, यज्ञपात्र आदि) भी सभा ने प्रयत्नपूर्वक सुरक्षित रखी है। अपने ग्रन्थों के प्रकाशन के लिए स्थापित वैदिक यन्त्रालय के लिए विदेश से मंगाई हुई प्रिन्टिंग मशीन भी संग्रहालय में सुरक्षित है।

महर्षि ने गोरक्षा के लिए हस्ताक्षर अभियान प्रारम्भ किया था। वह २ करोड़ हस्ताक्षरयुक्त ज्ञापन लार्ड रिपन को देना चाहते थे। महर्षि के गोरक्षा के सन्देश को प्रसारित करने की दृष्टि से ही सभा ने ऋषि उद्यान में भारतीय गिर प्रजाति की गायों की गोशाला भी संचालित की हुई है।

आर्ष शिक्षा के प्रसारार्थ सभा आर्ष गुरुकुल का संचालन भी करती है। इसमें अधीतविद्य अनेक विद्वान् आज देशभर में आर्यसमाज का प्रचार कर रहे हैं।

महर्षि के सन्देशों के प्रसारार्थ प्रतिवर्ष महर्षि के बलिदान दिवस पर ऋषि मेला भी सभा आयोजित करती है। इस सबका उद्देश्य महर्षि के विचारों से अनुप्राणित समाज का निर्माण करना है, जिससे वैदिक संस्कृति को आदर्श रूप में विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके। आज सब ओर भय और निराशा का वातावरण बढ़ता दिखाई देता है। मनुष्य समाज कहीं जाति, कहीं उपासना पद्धति अथवा कहीं भौगोलिक सीमाओं में बंटकर कलह-द्वेषपूर्ण वातावरण की वृद्धि कर रहा है। मानव मात्र का कल्याण मानवता की रक्षा करने में ही है। '**पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वत:**' सदृश प्रेरणा वेद के अतिरिक्त विश्व साहित्य में कहीं भी उपलब्ध नहीं है। इस संक्रमण काल में इस सन्देश के प्रसार की सर्वाधिक आवश्यकता है। सभा अहर्निश प्रयत्नशील है। महर्षि का बलिदान इसी संस्कृति की रक्षा के लिए हुआ था।

महर्षि बलिदान की अर्धशताब्दी के अवसर पर महर्षि भक्तों ने सन् १९३३ ई. में अजमेर में उपस्थित होकर प्रेरणा प्राप्त की थी। पुन: सन् १९८३ ई. में विशाल स्तर पर देश-विदेश से पधारे महर्षि भक्तों ने पूर्ण उत्साह से एकत्रित होकर पुन: प्रेरणा प्राप्त की।

महर्षि की द्विजन्मशताब्दी के अवसर पर दिल्ली, टंकारा के भव्य उत्सवों की शृंखला में परोपकारिणी सभा **१८ से २० अक्टूबर सन् २०२४ को विशाल आयोजन कर रही है**। इस आयोजन का विशेष उद्देश्य है आर्यों में आई शिथिलता को दूर कर मिशनरी भाव से संगठन के प्रति समर्पण भाव का विस्तार करना। आज कहीं न कहीं समर्पण का भाव तिरोहित हो रहा है। निष्पक्ष आलोचक हमारी पारस्परिक ईर्ष्या-द्वेष, पदलोलुपता की चर्चा करते हुए संगठन की प्रासंगिकता पर प्रश्न खड़े करते रहते हैं। निराशा का भाव नई पीढ़ी में साफ दिखाई देता है।

आशा की जानी चाहिए कि महर्षि की देहयष्टि के आभामण्डल से आभासित अवशेषों को अपने अन्दर समाहित किए ऋषि उद्यान की भूमि पर आयोजित समारोह नवजीवन की प्रेरणा प्रदान करने में समर्थ होगा।

इस अवसर पर महर्षि भक्तों की उपस्थिति के साथ सर्वात्मना सहयोग भी सभा को प्राप्त होगा। आयोजन की सफलता आप सभी के सहयोग पर निर्भर है। इसे सफल बनाने के लिए आओ चलो अजमेर चलें।

- डॉ. वेदपाल

महर्षि की द्विजन्मशती के उपलक्ष्य में--

प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा के उद्धारक महर्षि दयानन्द

- डॉ. सुरेन्द्र कुमार

महर्षि दयानन्द सरस्वती की वेद-आधारित प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान में अगाध निष्ठा थी। उनके लेखन में समग्र प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा का सार निहित है। प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा ही आधुनिक युगानुरूप आवश्यक समन्वय के साथ महर्षि दयानन्द की है। दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं है। महर्षि क्रान्तिकारी समाज सुधारक भी थे, वेद-शास्त्रों के मर्मज्ञ विद्वान् और भाष्यकार भी थे, ऋषि-मुनियों की प्राचीन ज्ञान-विज्ञान परम्परा के इस युग के प्रमुख उद्धारक भी थे। अध्यात्म, राजनीति, भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, विज्ञान, समाजशास्त्र, मत-मतान्तर, शायद ही कोई विषय शेष होगा जिस पर महर्षि ने अपने परिवर्तनकारी विचार न दिये हों। ऋषि तकनीकी रूप से वैज्ञानिक नहीं थे, किन्तु फिर भी वे एक वैदिक वैज्ञानिक विचारक थे। यह उनके वेदभाष्य और लेखन से स्पष्ट झलकता है। उनका व्यक्तित्व भी विराट् था और कर्तृत्व भी विराट् था।

महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट भारत की प्राचीन ज्ञान-विज्ञान परम्परा एक गौरवशाली और समृद्ध परम्परा रही है, जिसके अन्तर्गत रहकर भारतवर्ष ने अपने उद्भव काल से लेकर अंग्रेजी सरकार द्वारा मैकाले की शिक्षा व्यवस्था लागू किये जाने तक, हजारों वर्षों की एक लम्बी अवधि तक, आध्यात्मिक एवं भौतिक, ज्ञान एवं विज्ञान, दोनों पक्षों में चहुंमुखी उन्नति एवं प्रगति की थी।

उसी प्राचीन ज्ञान-विज्ञान प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षित और प्रशिक्षित रहते हुए भारत विश्वगुरु कहलाया, आर्थिक समृद्धि में स्वर्ण-भूमि, सोने की चिड़िया एवं पारसमणि कहलाया, जिसका स्पर्श करके लोह रूप दरिद्र विदेशी भी धनाढ्य होते रहे। शूरवीरता में यह देश अजेय रहा। जिसकी वीरता के सामने विश्वविजेता होने का सपना लेकर आने वाले सिकन्दर जैसे योद्धा को पीठ दिखाकर वापस भागना पड़ा।

महर्षि द्वारा समर्थित उसी ज्ञान परम्परा के अन्तर्गत रहते हुए इस देश में महर्षि वाल्मीकि, महर्षि व्यास, कालिदास आदि महाकवि हुए; महर्षि मनु, जनक, विश्वामित्र जैसे राजर्षि और अशोक जैसे चक्रवर्ती सम्राट् हुए, महर्षि चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट जैसे आयुर्वेद के चिकित्सक हुए, मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम और योगीराज श्रीकृष्ण जैसे महामानव हुए, ऋषि भरद्वाज जैसे विमानशास्त्र निर्माता, दानवीर कर्ण जैसे दानी; अर्जुन जैसे धनुर्धर और भीम जैसे गदाधर हुए, नल-नील जैसे समुद्र सेतु निर्माता, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, राणा सांगा जैसे स्वातन्त्र्य वीर योद्धा हुए, जिनके कारण भारत आज विश्व में विश्वगुरु के रूप में प्रसिद्ध है। इन सबका नाम आज भी इस देश के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा और श्रद्धापूर्वक याद किया जाता है। इतिहास साक्षी है कि भारत की जितनी उन्नति-प्रगति हुई वह सब प्राचीन वैदिक ज्ञान-विज्ञान परम्परा में हुई और जितना ह्रास हुआ है वह सब पौराणिक पाखण्ड और अन्धविश्वास-युक्त परम्परा के अन्तर्गत हुआ है।

महर्षि द्वारा निर्दिष्ट ज्ञान- विज्ञान की परम्परा मूल रूप से वेदों, वेदांगों, उपांगों, वैदिक शास्त्रों, उपनिषदों, स्मृतियों, रामायण, महाभारत और ऋषि-मुनियों द्वारा प्रदत्त ज्ञानकोष पर आधारित है, क्योंकि प्राचीनकाल में वेद-वेदांगों पर केन्द्रित अध्ययन-अध्यापन प्रणाली ही प्रचलित थी। रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने महाराज दशरथ, राम आदि चारों भाइयों को स्थान-स्थान पर ''वेद-वेदांग तत्वज्ञ:'' और ''धनुर्वेद में प्रवीण'' लिखा है। दशरथ के सभी वसिष्ठ आदि ऋत्विज् और सुमन्त्र

आदि मन्त्री राजनीति, अर्थनीति, न्यायनीति के साथ-साथ वेद-शास्त्रों के ज्ञाता थे। विश्रवा ऋषि के पुत्र दशग्रीव रावण ने भी गोकर्ण आश्रम में रहकर तपस्या करते हुए वेद- वेदांगों का अध्ययन किया था। श्रीराम रावण का परिचय देते हुए कहते हैं-

एषोऽहिताग्निश्च महातपा च,
वेदान्तगः कर्मसु चाग्र्यशूरः।

अर्थात् 'इस रावण ने अपने महल की यज्ञशाला में यज्ञाग्नि स्थापित की हुई थी। अर्थात् यह अग्निहोत्री था। यह महातपस्वी और वेदों के तत्त्व को जानने वाला था, अपने क्षत्रिय के कर्त्तव्यों में अग्रणी शूरवीर था।' (६.१०९.२३)

रावण के पुत्र और सभी प्रमुख योद्धा भी वेद-शास्त्र पढ़े हुए थे। हनुमान् ने वेदों और संस्कृत व्याकरण का गम्भीर अध्ययन किया था। कौशल्या, सीता आदि वेदमन्त्रों का वाचन करके स्वस्तिवाचन,यज्ञ और संध्योपासन करती थी। वानरराज बाली को समुद्र तट पर वेदमन्त्रों के उच्चारणपूर्वक संध्योपासन करते हुए वर्णित किया गया है। महाभारत में महर्षि व्यास कौरवों-पांडवों का इन शब्दों में परिचय देते हैं-

''सर्वे वेदविदाःशूराः सर्वे सर्वास्त्रकोविदाः''

(वन. ८६.९)

'पांडव और कौरव सब योद्धा वेदों के ज्ञाता हैं और सब शस्त्रास्त्रों में प्रवीण हैं।'

प्राचीन भारत में ज्ञान- विज्ञान प्राप्ति के लिए वेद-वेदांग आधारित प्रणाली ही थी। महर्षि की वेदों और उस आर्ष प्रणाली के प्रति दृढ़ आस्था थी। इसीलिए उन्होंने 'वेदों की ओर लौटो' का नारा दिया। महर्षि द्वारा प्रस्तुत ज्ञान-विज्ञान परम्परा का अध्ययन करने पर हमें उसमें बहुत-सी अनुपम विशेषताएं मिलती हैं जो दूसरे किसी महापुरुष के लेखन में नहीं मिलती। आइये, उनके चिन्तन की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताओं पर दृष्टिपात करते हैं।

महर्षि ने अन्धविश्वास और पाखण्ड का प्रबल शब्दों में खंडन किया हैं, क्योंकि ये व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र की बौद्धिक तथा सांगठनिक हानि करते हैं। मनुष्य की बुद्धि को कुंठित और विचारहीन बना देते हैं। बौद्धिक कुंठा से मनुष्य और राष्ट्र की सभी प्रगतियां बाधित हो जाती हैं।हिन्दुओं और हिन्दू राष्ट्र की पराजय और पतन इसके साक्षात् उदाहरण हैं। महाभारत काल के उपरान्त ज्यों-ज्यों वैदिक ज्ञान-विज्ञान परम्परा का ह्रास हुआ,तो विडम्बना देखिए, पौराणिक धर्माचार्यों ने अधिकांश जनता से अपने धर्मग्रंथ वेदों के अध्ययन-अध्यापन का अधिकार छीन लिया, यहां तक कि उनको तालों में बंद करके दर्शन करना भी वर्जित कर दिया, जबकि सब मत-मतान्तरों वाले अपने धर्मग्रन्थ का खुलकर लाखों की संख्या में प्रचार-प्रसार करते हैं। महर्षि दयानन्द इस युग के अकेले महापुरुष थे जिन्होंने सभी मानवों को वेदाध्ययन का अधिकार प्रदान किया। यहां तक कि अपराधियों और दस्युओं तक को वेद पढ़ने का निर्देश दिया है। उनका मानना था कि वेदों के पढ़े बिना न तो किसी का सुधार किया जा सकता है और न ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' वेदों के इस आदेश का पालन करते हुए विश्व को आर्य बनाया जा सकता है।

सत्यार्थप्रकाश में महर्षि ने परिवार के प्रत्येक सदस्य और सेवक तक को शिक्षित करने-कराने का आदेश अभिभावकों को दिया है। जबकि रूढ़िवादी धर्माचार्यों का लक्ष्य रहा है शिक्षा का निषेध करके समाज के अधिसंख्य लोगों को अशिक्षित बनाये रखना, ऊंच-नीच का वातावरण बनाकर समाज में भेदभाव उत्पन्न करना, छूत-अछूत की धारणा फैलाकर समाज के वर्गों में परस्पर घृणा का वातावरण निर्मित करना। महर्षि दयानन्द दयालु थे, राष्ट्रभक्त थे। उनका महान् उद्देश्य रहा है देश के प्रत्येक नागरिक को सुशिक्षित बनाना, ऊंच-नीच का वातावरण समाप्त करके देश को संगठित करना, छूत-अछूत का भेदभाव मिटाकर समाज में समता और सद्भाव का वातावरण बनाना।

महर्षि की वेदाधारित ज्ञान-विज्ञान प्रणाली के प्रति गहरी निष्ठा थी। उसका प्रमाण उनके पत्र व्यवहार से मिलता है। महर्षि ने परमेश्वर के अतिरिक्त कभी किसी से प्रार्थना-याचना नहीं की, किन्तु उन्होंने वैदिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन-अध्यापन को अपनाने के लिए अंग्रेज सरकार से भी प्रार्थना-याचना करना स्वीकार्य समझा, क्योंकि उन्होंने पत्र-विज्ञापन में यह माना है कि आर्ष शिक्षा प्रणाली के बिना मेरे देश का कल्याण और उत्थान नहीं हो सकता। क्योंकि शासक अंग्रेज हैं अत: वही इस प्रणाली को लागू कर सकते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती भारतीय ज्ञान परम्परा के एकमात्र ऐसे शिक्षाशास्त्री हैं जिन्होंने अपनी अध्ययन-अध्यापन प्रणाली में विश्व का सबसे व्यापकतम ज्ञान-विज्ञान अर्जित करने का निर्देश दिया है। उन्होंने बालक-बालिकाओं को परमाणु से लेकर प्रकृति तक और प्रकृति से लेकर परमात्मा तक का ज्ञान-विज्ञान क्रियात्मक पद्धति सहित प्राप्त करने का निर्देश दिया है। महर्षि के निर्देश में संसार का परमाणु से लेकर परमात्मा तक समग्र ज्ञान-विज्ञान समाहित हो जाता है। इस ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा के साथ महर्षि ने स्वभाषा एवं विदेशी भाषाओं के शिक्षण की भी व्यवस्था दी है। यह उनकी युगानुरूप व्यवस्था है। वर्तमान पाश्चात्य शिक्षण पद्धति में यह व्यापकता नहीं है।

महर्षि-विहित इस ज्ञान-विज्ञान परम्परा के प्रचार-प्रसार एवं क्रियान्वयन का दायित्व उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और उसकी संस्थाओं पर है, परन्तु उनमें अभी तक महर्षि द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रम का आंशिक शिक्षण-प्रशिक्षण ही हो पा रहा है। अभी तक कोई संस्था ऐसी नहीं है जो समग्रता से महर्षि की ज्ञान-विज्ञान परम्परा के पालन की व्यवस्था कर सकी हो। महर्षि के परम भक्त स्वामी श्रद्धानन्द जी ने उसका प्रयास गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना से शुरू किया था, किन्तु वह कई कारणों से एक सीमा से आगे नहीं बढ़ सका।

उक्त दोनों परम्पराओं में तीन मूलभूत बड़े अंतर हैं। पहला अन्तर तो यह है कि प्राचीन ज्ञान परम्परा में शिक्षा और नैतिक संस्कारों का शिक्षण साथ-साथ चलता था। शिक्षा के साथ-साथ बालकों एवं बालिकाओं को शिष्टाचार, नैतिकता, मर्यादा, कर्त्तव्यों से अनुप्राणित किया जाता था। ''बालक-बालिका को सिखाया जाता था-- मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव, अतिथिदेवो भव।''

अर्थात् 'माता, पिता, अतिथि को देवता के समान सम्माननीय मानकर उनकी सेवा-शुश्रूषा करो।'

(तैत्ति. उप. ११.२)

महर्षि दयानन्द तो इससे भी एक कदम आगे बढ़कर सत्यार्थप्रकाश में यह बर्ताव करने का निर्देश देते हैं कि ''स्त्री के लिए पति और पुरुष के लिए पूजनीया स्त्री है।'' (समु. ११) प्राचीन परम्परा में बच्चों को जो इस प्रकार से पारिवारिक संस्कार दिये जाते थे, तभी उनमें पारिवारिक संस्कार पनपते थे। उसका परिणाम यह होता था कि परिवार में सुख-शांति का, सेवा-शुश्रूषा सम्मान का वातावरण बनता था। आज की ज्ञान परम्परा में यह विडम्बना है कि प्रत्येक माता-पिता अपनी सन्तानों को श्रवण कुमार तो बनाना चाहते हैं, किन्तु उनको श्रवण कुमार के संस्कार कहीं से नहीं मिलते।

भारतीय वैदिक ज्ञान-परम्परा में संस्कारों को माता-पिता के सुखी भावी जीवन के लिए एक निवेश की तरह माना गया है। जैसे समृद्धि के लिए व्यापारी व्यापार में धन का निवेश किया करते हैं, वैसे सन्तानों में अच्छे संस्कार देना माता-पिता द्वारा अपने भविष्य के लिए किया गया निवेश होता है। सन्तानों को यदि अच्छे संस्कार दिये जायेंगे तो माता-पिता का भविष्य उतना ही सुखी-शान्त, सम्मानित-सुरक्षित रहेगा, अन्यथा धीरे-धीरे सबको वृद्धाश्रम की शरण लेनी पड़ेगी या मुम्बई की बूढ़ी मां की तरह फ्लैट में सूखकर, अथवा लखनऊ के

सेनाधिकारी की तरह स्वयं को गोली मारकर मरना पड़ेगा।

दूसरा प्रमुख अन्तर यह है कि वैदिक ज्ञान-विज्ञान परम्परा में मानवता की शिक्षा देकर मानव निर्माण पर विशेष बल दिया जाता है, उसका उद्देश्य है 'मनुर्भव' अर्थात् एक अच्छे मनुष्य का निर्माण करना। मानव को सही अर्थों में मानव बनाना, या मानव को महामानव बनाना। जबकि पाश्चात्य परम्परा में केवल अक्षरज्ञान या यों कहिए विषय के ज्ञान पर ही बल दिया जाता है। यही कारण है कि पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान परम्परा में व्यक्ति अच्छा डाक्टर, इन्जिनीयर, वकील, अध्यापक तो बन जाता है, किन्तु अच्छा मानव भी हो, यह जरूरी नहीं, क्योंकि उसे न किसी स्कूल में, न कॉलेज में, न यूनिवर्सिटी में और न किसी कक्षा में, न घर में मानवता के संस्कार देने की व्यवस्था है। उसका दुष्परिणाम सामने यह आता है कि कुछ डॉक्टरों द्वारा नकली ऑप्रेशन करने या शरीर के अंग निकाल लेने, कुछ इंजीनियरों के द्वारा घटिया निर्माण करने से भवन और पुल गिरने, सर्विस करनेवाले कुछ अधिकारियों-कर्मचारियों द्वारा कर्त्तव्य पालन में कोताही बरतने के समाचार आते रहते हैं। ऐसे लोगों का येन-केन-प्रकारेण पैसा कमा लेना ही मुख्य लक्ष्य रह गया है।

तीसरा बड़ा अंतर यह है कि भारतीय वैदिक ज्ञान परम्परा व्यक्ति को दोहरा जीवन जीने का अधिकार नहीं देती; जबकि पाश्चात्य परम्परा ने व्यक्ति को दोहरा जीवन जीना सिखाया है। प्राचीन भारतीय परम्परा में व्यक्ति की सामाजिक जीवन की जो शैली होती थी,वही निजी जीवन की होती है। किन्तु पाश्चात्य शिक्षा में सामाजिक जीवन शैली भिन्न होती है और निजी जीवन शैली भिन्न हो जाती है अर्थात् स्वच्छन्द होती है। बालक-बालिकाएं अपने अभिभावकों और गुरुओं का दोहरा आचरण देख आस्थाविहान हो जाते हैं। बालकों में वैयक्तिक संस्कारों का निर्माण नहीं हो पाता। इसी कारण महर्षि की शिक्षा पद्धति में यह भेदभाव रहित विशेषता पायी जाती है कि वे शिष्यों के लिए जिन कर्त्तव्यों का निर्देश करते हैं, वही कर्त्तव्य शिक्षकों के भी बतलाते हैं।

प्राचीन वैदिक ज्ञान-परम्परा में शिक्षा के साथ नैतिकता के प्रशिक्षण का यह सुपरिणाम था कि स्नातक बनते समय घर लौटने वाले शिष्य के समक्ष आचार्य यह घोषणा करने का साहस करता सकता था कि **''यान्यस्माकं अनवद्यानि कर्माणि तानित्वयोपास्यानि नो इतराणि''** यान्यस्माकम्-सुचरितानि तानि त्वयोपा- स्यानि नो इतराणि।

अर्थात् 'हे स्नातक! हमारे जो प्रशंसनीय कर्म हैं, उन्हीं का तुम अनुसरण करना, निन्दनीयों का नहीं।' हमारे जो अच्छे आचरण हैं, उन्हीं का तुम अनुसरण करना, उनसे विपरीत का नहीं।' (तैत्ति. उप. ११.२)

शिक्षा से प्राप्त संस्कारों का ही यह सुपरिणाम था कि छान्दोग्य उपनिषद् में वर्णित प्राचीन राजर्षि अश्वपति यह घोषणा करने का साहस करते हैं-

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निः नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुत।।

अर्थात् 'मेरे राज्य में कोई चोर नहीं है, न निन्दित आचरण वाला, न मदिरा पान करनेवाला, न यज्ञ न करनेवाला, न विद्वत्तारहित, न कोई पुरुष दुराचारी और न कोई स्त्री दुराचारिणी है। (४.११.५) क्या आज का कोई शासक यह कहने का साहस कर सकता है?

अब महर्षि द्वारा प्रस्तुत प्राचीन विज्ञान परम्परा पर संक्षिप्त विचार किया जाता है। वैज्ञानिक विद्याओं का अध्ययन-अध्यापन उपवेदों और उनके सहायक शास्त्रों तथा वेदांगों पर आधारित होता था। ज्योतिष वेदांग के अन्तर्गत ग्रहों-उपग्रहों आदि सम्बन्धी खगोल एवं भूगोल विद्या का ज्ञान दिया जाता था। जब यूरोप में धरती को गोल कहनेवाले गैलीलियो आदि वैज्ञानिकों को बाइबल-विरोधी कहकर जेल में डाला जा रहा था या जलाया जा रहा था, उससे बहुत पहले वैदिक भारत का बच्चा-बच्चा इस विद्या को इसके 'भूगोल' नाम से ही जानता

था कि भू गोल है। खगोल विद्या के अन्तर्गत नवग्रहों और उनकी गतियों की खोज सर्वप्रथम प्राचीन भारत में हुई। आयुर्वेद के अन्तर्गत चिकित्सा विज्ञान का, ९ धनुर्वेद के अन्तर्गत शस्त्रास्त्रों, राजनीति एवं अर्थशास्त्र का, अर्थवेद के अन्तर्गत शिल्प कलाओं एवं विज्ञानों का शिक्षण-प्रशिक्षण दिया जाता था।

वेदों में अनेक विज्ञानों का वर्णन है। इसी आधार पर आर्यसमाज के तीसरे नियम में महर्षि ने कहा कि ''वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है'' और उसको अपने वेदभाष्य में सिद्ध करके दिखा दिया। महर्षि भारद्वाज लिखते हैं कि उन्होंने 'विमान-शास्त्र' की रचना वेदों का मंथन करके की है, जिसमें दर्जनों प्रकार के विमानों के निर्माण की तकनीक लिखी है। वैदिक विज्ञान के आधार पर रामायण काल में पुष्पक विमान निर्मित हो चुका था।

महाभारत में वर्णन है कि (दक्षिण में नर्मदा तट पर स्थित) चेदि देश के राजा का एक विशेषण 'उपरिचर' विशेषण इस कारण था कि वह अधिकांशत: विमान से गोवा यात्रा करता था। उसी परम्परा को आगे बढ़ाने की भावना से महर्षि ने अपने वेदभाष्य और अन्य ग्रन्थों में सौ से अधिक शिल्पकलाओं और विज्ञानविद्याओं का उल्लेख करके पाठकों को विज्ञान की शिक्षा ग्रहण करने-कराने की ओर प्रेरित किया है।

वैदिक शिक्षा प्रणाली में गान्धर्ववेद के द्वारा संगीत कलाओं (नृत्य, गायन, वादन) का अध्ययन-प्रशिक्षण होता था। महर्षि ने संगीत विद्या की शिक्षण-प्रशिक्षण परम्परा को बनाये रखने का निर्देश दिया है। महर्षि सत्यार्थ प्रकाश में प्रेरणा देते हुए लिखते हैं- ''गान्धर्ववेद कि जिसको गान विद्या कहते हैं, उसमें स्वर, राग, रागिणी, समय, ताल, ग्राम, तान, वादित्र, नृत्य, गीत आदि को यथावत् सीखें; परन्तु मुख्य करके सामवेद का गान वादित्र-वादनपूर्वक सीखें... परन्तु भड़ुवे, वेश्या और विषयासक्ति-कारक वैरागियों के गर्दभ-शब्दवत् व्यर्थ आलाप कभी न करें।'' (समु. ३,४६)

''मनुष्यों को चाहिये कि हँसी और व्यभिचारादि दोषों को छोड़ और गाने, बजाने, नाचने आदि की शिक्षा को प्राप्त होके आनन्दित होवें।'' (यजुर्वेद ३०.२० भावार्थ)

महर्षि दयानन्द आर्ष परम्परा से वेदों का वैज्ञानिक भाष्य करनेवाले सर्वप्रथम और एकमात्र भाष्यकार हैं। महर्षि ने प्रत्येक बालक-बालिका, स्त्री-पुरुष के लिए परमाणु से परमात्मा तक की वेदोक्त विद्याओं को सीखने की न केवल प्रेरणा दी है, अपितु उस परम्परा का पुनरुद्धार किया है। प्राचीन ज्ञान-विज्ञान परम्परा का यह पुनरुद्धार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि महर्षि जब कार्यक्षेत्र में उतरे उस समय रूढ़िवादी पौराणिकों ने वेदों की परम्परा को विलुप्त करके पुराणों के अध्ययन-अध्यापन की भेदभावपूर्ण परम्परा का आरम्भ किया हुआ था। महर्षि दयानन्द द्वारा प्राचीन ज्ञान-विज्ञान परम्परा का यह पुनरुद्धार वेद-वेदांग शिक्षा की पुन: प्रतिष्ठा का साहसी और क्रांतिकारी प्रयत्न है।

(संरक्षक परोपकारिणी सभा, पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में सञ्चालित आर्ष गुरुकुल में प्रवेश प्रारम्भ हैं। वैदिक धर्म के उपदेशक-प्रचारक बनने के इच्छुक युवा प्रवेश हेतु शीघ्र आवेदन करें।

प्रवेश हेतु अविवाहित एवं आठवीं उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। भोजन एवं आवास की नि:शुल्क सुविधा है। **सम्पर्क सूत्र: ८८९०३१६९६१**

आर्यसमाज के प्रामाणिक इतिहास की कुछ प्रेरक घटनायें

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

आजकल मैं आर्यसमाज के कुछ खोजपूर्ण, मौलिक व महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक व इतिहास विषय के ग्रन्थों के सम्पादन व प्रकाशन के कार्य में दो कर्मवीर, सुयोग्य व प्रभावशाली आर्यपुरुषों की प्रेरणा व अथक सहयोग से अत्यन्त व्यस्त हूँ। यह कहिये के सिर खुजलाने का भी समय नहीं है। इतना व्यस्त होने पर भी साथ-साथ कुछ अलभ्य स्रोतों का सूक्ष्म अध्ययन करके नये पठनीय साहित्य के सृजन में भी लगा रहता हूँ।

जब सात खण्डों वाले आर्यसमाज के इतिहास का प्रकाशन करने की योजना बनाई गई तो मुझे भी इतिहास मण्डल में लिया गया था। इस मण्डल की पहली बैठक में कुछ नेता भी पधारे। मैंने तब भाँप लिया यह इतिहास लिखने वाले मेरे अध्ययन, खोज व पुस्तकालय का तो लाभ लेना चाहते हैं, परन्तु लेखक आप ही बनेंगे। मुझे नहीं बनायेंगे।

तभी एक विचित्र घटना घटी। श्री सत्यकेतु जी ने इतिहास मण्डल के सब सदस्यों को पत्र लिख कर पूछा, ''आपके पुस्तकालय में इतिहास लेखन के मूल स्रोत क्या-क्या है?'' सबने उत्तर में कुछ लिखा। मैनें भी अपने पत्र में आर्यसमाज के विलुप्त हो चुके इतिहास के मूल स्रोतों, पत्रिकाओं की फाईलों, सभाओं, समाजों व संस्थाओं की छपी रिपोर्टों, विज्ञप्तियों, विज्ञापनों के अपने भण्डार की संक्षिप्त जानकारी लिख भेजी।

लौटती डाक से सत्यकेतु का पत्र आया, ''काश कि किसी और आर्यपुरुष ने भी जानकारी के ऐसे और इतने स्रोत संग्रहीत किये होते।''

शीघ्र सबने छीना-झपटी करके अपने लिए लेखन कार्य ले लिया। मुझे सेवा व सहयोग के लिये ही मण्डल में रखा गया। मैनें बड़ी शान से और पूरे स्वाभिमान से इतिहास मण्डल से त्याग पत्र दे दिया। केवल उनकी पहली बैठक में ही मैं गया था।

अलभ्य स्रोत विषयक एक घटना देकर मैं आज के विषय पर लेखनी चलाऊंगा। पं. लेखराम जी ने जोधपुर में महर्षि के साथ घटी घटनाओं, विषपान तथा बलिदान तक की एक-एक घटना सब 'आर्य समाचार' उर्दू मासिक मेरठ के आधार पर ही जीवन चरित्र में लिखी हैं। देवेन्द्र बाबू आदि सब जीवनी लेखकों ने उसी का लाभ लेकर ऋषि के अन्तिम एक मास का वृत्तान्त लिखा है। आज पूरे आर्यसमाज में किसी सभा, संस्था तथा विद्वान् के पास 'आर्य समाचार' का वह ऐतिहासिक अंक नहीं है। मेरठ के किसी समाज के पास भी वह एक अङ्क नहीं है।

मैंने उस अङ्क से महर्षि विषयक लेख की फोटो कापी कई अलभ्य पुस्तकों के साथ परोपकारिणी सभा के पुस्तकालय को भेंट की थी, परन्तु मैं तभी समझ गया कि साहित्य तो पुस्तकालय में रखा गया है, परन्तु ऐसी सामग्री सुरक्षित नहीं रखी गई।

प्रबुद्ध पाठक यह भी समझ लें कि 'आर्य समाचार' के आरम्भिक काल के पन्द्रह बीस वर्षों के अंकों की सहायता के बिना कोई माई का लाल आर्यसमाज के उस काल का प्रामाणिक इतिहास ठीक-ठीक नहीं लिख सकता। इसका एक ज्वलन्त प्रमाण लीजिये। ऑस्ट्रेलिया के डॉ. जोर्डन्स ने ऋषि के जीवनकाल में स्थापित समाजों की वह सूची समाजियों से मांगी जो 'आर्य समाचार' में छपने का उल्लेख पं. इन्द्र जी ने किया है।

सारे आर्यसमाज ने हाथ खड़े कर दिये। मैंने कहा, ''मैं दे सकूंगा। कुछ प्रतीक्षा करें।'' मैंने उस सूची के साथ और ऐसी सूचियाँ 'परोपकारी' मासिक तथा महर्षि के जीवन चरित्र में भी छपवा दीं। विदेशों से भी सामग्री खोज कर दे दी। अजमेर में सन् १८८४ में ऋषि स्मारक के लिय अपील पर प्राप्त धन दानियों के नाम सहित

परोपकारी तथा ऋषि जीवन में प्रकाशित कर दिया। इतिहास की जानकारी के लिए यह 'ज्ञान विस्फोट' से क्या कम महत्त्व की घटना है? आर्यसमाज मेरी इस सेवा का, इस खोज का मूल्याङ्कन ही न कर सका।

संघ वाले वर्षों से सन् १८९३ में शिकागो के धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानन्द के दिये गये व्याख्यान की दुहाई दे दे कर नही थकते। मैंने स्वामी विवेकानन्द जी के उस व्याख्यान से चौदह वर्ष पूर्व अमेरिका के The Sunday magzine प्रतिष्ठित पत्र में भारत के सब से पहले महान् नेता, विचारक व सुधारक पर प्रकाशित शानदार लम्बे लेख तथा महर्षि का फोटो छपा खोज कर प्रचारित प्रसारित कर दिया। आर्यसमाज ने इसका क्या महत्त्व समझा?

स्मरण रहे कि यह चित्र तथा यह लेख महर्षि के जीवन काल में ही छपा था। तब से लेकर वर्तमान काल तक इस फोटो व लेख का किसी को पता ही न चला।

जब पादरी शूलब्रैड महर्षि से ब्यावर मिला- ऋषि जी के प्रत्येक महत्त्वपूर्ण जीवन चरित्र में यह घटना छपी मिलती है कि जब-जब महर्षि ब्यावर में भक्तों को उपदेश दे रहे थे तब गोरा पादरी शूलब्रैड महर्षि के दर्शन करने उस सभा में पहुँचा। महर्षि ने तो दूर से आते हुए शूलब्रैड पादरी को न देखा। श्रोताओं को वह दूर से आता दिख गया। भक्तों ने ऋषि जी से कहा, ''पादरी शूलब्रैड आपसे मिलने आ रहे हैं।''

ऋषि जी ने सत्संगी सज्जनों से कहा, ''सत्संग वाली दरी को लपेट दीजिये।'' भक्तों ने झट से दरी को लपेट कर रख दिया, परन्तु पूछा नहीं कि ऋषि जी ने ऐसा क्यों कहा? जब बातचीत करके श्री शूलब्रैड चले गये तो भक्तों ने पूछा, ''महाराज जी! दरी को लपटने की आज्ञा का कारण क्या था?''

ऋषि जी ने सरलता से कहा, ''यह हमारे सत्संग की दरी है। इस पर हमारे छोटे-बड़े सब सत्संगी बैठकर उपदेश सुनते हैं। पादरी महोदय इस पर जूता लेकर चढ़ जाते। सत्संग की दरी का अपमान नहीं होना चाहिए। ऐसी दूसरी घटना इतिहास में नहीं मिलेगी। यह महर्षि के प्रखर देश प्रेम तथा धर्मभाव का ज्वलन्त प्रमाण है कि वह अपनी सत्संग की दरी का निरादर होता सहन नहीं कर सकते थे। मैंने किसी नेता को, किसी विद्वान् को कभी अपने किसी लेख व व्याख्यान में इस घटना पर बोलते कभी नहीं सुना। यह घटना अत्यन्त प्रेरणाप्रद है।''

इतिहास वही जो सत्य व तथ्य हो- आर्यसमाज के आरम्भिक काल के इतिहास का गम्भीरता से अध्ययन करने पर पता चलता है कि तब सब छोटे-बड़े आर्यसमाजी, क्या वक्ता, क्या लेखक और क्या समाजप्रेमी सज्जन सब सत्य भाषण व सत्य लेखन पर बल देते थे। अब गत पचास वर्षों के इतिहास पर दृष्टि डालिए तो आप देखेंगे क्या वक्ता, क्या लेखक और क्या अपने को इतिहासकार मानने वाले मनगढ़न्त घटनायें अथवा मिथ्या इतिहास परोसने में कतई संकोच नहीं करते।

सात खण्डों वाले आर्यसमाज के इतिहास में आप 'द्वितीय भाग' के इतिहास का पन्द्रहवाँ अध्याय पृष्ठ ४११ तनिक ध्यान से पढ़िये। इसमें शाहपुरा के आर्यसमाज की स्थापना व सेवा का वृत्तान्त ध्यान से पढ़ें। इस अध्याय के लेखक श्रीमान् डॉ. भवानीलाल भारतीय हैं। पृष्ठ ४११ पर नीचे शाहपुरा आर्यसमाज के इतिहास पर लिखते हुए आपने श्री नाहरसिंह के निमन्त्रण पर महर्षि दयानन्द जी के शाहपुरा आने तथा प्रचार आदि पर कोई दस पंक्तियाँ लिखी हैं।

आर्यसमाज की स्थापना कब?- वहाँ के आर्यसमाज का इतिहास लिखने के लिये आर्यसमाज शाहपुरा की स्थापना की घटना लिखनी चाहिये थी। आर्यसमाज की स्थापना से ही तो आर्यसमाज का इतिहास लिखा जा सकेगा। लेखक जी लिखते हैं, ''शाहपुरा राज्य ने आर्यसमाज के प्रचार एवं प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। राज्य की ओर से वैदिक धर्म के प्रचार के लिए ३० रुपये मासिक पर एक उपदेशक की नियुक्ति

का भार वहन करने का दायित्व राजाधिराज सर नाहरसिंह ने सहर्ष उठाया था। कालान्तर में जब शाहपुरा में आर्यसमाज की स्थापना हुई तो राज्य की ओर से सब प्रकार का सहयोग निरन्तर मिलता रहा।''

लेखक में इतना साहस नहीं कि वह यह स्वीकार करे कि वह आर्यसमाज की स्थापना तिथि की खोज करने में विफल रहा। 'कालान्तर' शब्द की ओट में इतिहास को गोलमोल कर दिया। जिस तथ्य का, जिस विषय का ज्ञान न हो, उस विषय में टाँग अड़ाना ठीक नहीं है। पाठकों के सामने झूठ परोसना पाप है और अधर्म है। विलुप्त इतिहास की खोज करने के लिए भागदौड़, कष्ट सहन करने तथा जेब से धन फूंकने की हिम्मत व लगन हर किसी में कहाँ? इसके लिये पं. लेखराम जी का हृदय चाहिये।

इन पंक्तियों के लेखक ने वर्षों की सतत साधना के पश्चात् आर्यसमाज शाहपुरा की स्थापना तिथि व इतिहास खोज दिखाया। एक बार तिथि तो स्मरण रही, परन्तु वह पृष्ठ तथा आर्य समाचार के उस अंक का मास व पृष्ठ आदि भूल गया। पुनः लम्बे समय तक एक-एक पृष्ठ की एक-एक पंक्ति का अध्ययन करके वह प्रमाण खोज लिया गया जो शब्दशः आगे उद्धृत किया जा रहा है। ''२६ मार्च सन् १८८५ के भारत मित्र से ज्ञात हुआ है कि मिती चेत...अमावस दो शंबा के दिन महाराजा नाहरसिंह जी शाहपुर वाले के आग्रह से नगर में भी वैदिक धर्म सभा अर्थात् आर्यसमाज स्थापित हुआ।[१]''

यह दुर्लभ अंक सेवक को मेरठ के एक ऋषिभक्त ने सस्नेह भेंट किया था। ऐसी अनूठी भेंट प्रभु कृपा तथा महापुरुषों के आशीर्वाद का ही फल है।

इतिहास की परतों के नीचे दबा तथ्य- राजा राम मोहन राय पहला ब्राह्मण कुल उत्पन्न हिन्दू था जो १८३१ ई. में सागर पार इंग्लैण्ड पहुँचा। दो वर्ष पश्चात् वहीं चल बसा व ईसाई विधि विधान से ब्रस्टल में दबाया गया। उसके जवन व मृत्यु पर आर्यविद्वानों ने बहुत कुछ लिखा है। उसकी कब्र तथा छत्री देखने अब भी हिन्दू जाते रहते हैं।

इतिहास का अनावरण- एक आर्य खुशवक्त राय ने तब इंग्लैण्ड जाक खोज करके इस तथ्य का अनावरण किया था कि मृत्यु के समय उसके शरीर पर यज्ञोपवीत धारण किया हुआ था। भारत में कोई इस इतिहास को नही जानता।[२]

अगली पीढ़ी के आर्यवीरों का कर्त्तव्य- अगली पीढ़ी के धर्मनिष्ठ उत्साही युवकों का यह कर्त्तव्य बनता है कि भूल का सुधार करें तथा यथार्थ प्रामाणिक इतिहास की रक्षा व प्रचार कार्य को सर्व सामर्थ्य से करें।

दक्षिण भारत में आर्यसमाज का प्रचार- आर्यसमाज मं कु छ मनगढ़न्त इतिहास गढ़ने वालों ने आर्यसमाज के इतिहास को प्रदूषित करने में कोई कमी न छोड़ी। सात खण्डों के इतिहास के दूसरे भाग के पृष्ठ ४५४ के आरम्भ में ही यह लिखा है, ''मैसूर और मद्रास में महर्षि दयानन्द के सन्देश को सर्वप्रथम ले जाने का श्रेय स्वाक नित्यानन्द को है। पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक (सन् १८९०-१९०० ई. तक) में इन्होंने मैसूर राज्य और मद्रास में आर्यसमाज का प्रचार किया।''

यह तो ठीक है कि आपने इस कालखण्ड में कर्नाटक आदि में कुछ प्रचार कार्य किया, परन्तु इस इतिहास लेखक के कल्पित इतिहास को झुठलाने के लिये हम परतां के नीचे दबे पड़े आर्यसमाज के इतिहास का यहाँ अनावरण करते हैं। महर्षि दयानन्द सदूर दक्षिण में प्रचारार्थ न जा सके, परन्तु उनके जीवन काल में ही उनके आशीर्वाद से कर्नाटक में आर्यसमाज पहुँच गया। अजमेर से श्री भारतीय ने ऐसा बहुत भ्रामक प्रचार किया। 'अपूर्व पत्र-व्यवहार' में ऋषि जी के एक पत्र से इन गप्पों की पोल खुल गई। कर्नाटक सभा की एक बैठक में मुझे बुलवाकर सब प्रमाण सुनकर वे बहुत ही प्रसन्न हुए। 'आर्यसमाचार मासिक मेरठ के सन् १८८६ के एक अंक चैत मास विक्रम संवत् १९४२ के पृष्ठ ४०९ पर'

''मद्रास में वैदिक धर्म का प्रचार''

शीर्षक से छपे लम्बे समाचार की कु छ पंक्तियाँ उद्धृत यहाँ की जाती हैं। ''दो वर्ष पूर्व मैंगलूर में आर्यसमाज स्थापित हो गया।'' जब इंग्लैण्ड का राजकुमार सन् १८७५ में मुम्बई आया तो महर्षि के व्याख्यानों की वहाँ धूम मची हुई। कर्नाटक के एक सुयोग्य सुशिक्षित धनीमानी युवक ने अपने कुछ मित्रों सहित ऋषि दर्शन किये। उनके उपदेश सुने, संवाद किया, उनका साहित्य क्रय किया और घर जाते ही आर्यसमाज स्थापित करके धूम मचा दी। अब मैंने कर्नाटक के आर्यसमाज के इतिहास में विस्तार से यह इतिहास दे रखा है।

परोपकारिणी सभा तथा फिरोजपुर के आर्य अनाथालय का इस समाज से पर्याप्त दान राशि गई। इससे यह प्रमाणित हो गया कि इतिहास के नाम पर गत पचास वर्ष में इतिहास प्रदूषण अभियान चलता रहा।

हरियाणा के हुतात्मा महात्मा फूलसिंह के दलितोद्धार आन्दोलन के समय मरण व्रत की वेला में स्वामी वेदानन्द जी उनकी सेवा के लिये दिन रात पास रहे। इन्हीं स्वामी वेदानन्द जी ने बाद में राजस्थान, पंजाब व हरियाणा में आर्यसमाज की अथक सेवा की। दलितोद्धार व शुद्धि के लिए आपने राजस्थान में मरणव्रत भी रखा। तब वैद्य विप्रबन्धु जी व ओम्मुनि जी ने आपकी सेवा व रक्षा का इतिहास रचा।

राजस्थान तथा हरियाणा का इतिहास लिखने वालों ने इनके नाम तक का कहीं उल्लेख नहीं किया। इतना अन्याय! मेरे साहित्य में इनका पर्याप्त इतिहास मिलेगा। राजस्थान में श्री ओम्मुनि यदाकदा इनकी सतत साधना का इतिहास अवश्य सुनाया करते हैं। वर्तमान में इतिहास लिखने वालों ने आर्यसमाज की सेवा व निर्माण में जीवनखपा देनेवालों पर तो एक पृष्ठ भी नहीं लिखा।

हरियाणा का इतिहास लिखने लिखवाने वालों ने पं. मनसाराम जी वैदिक तोप, जसवन्तसिंह वर्मा टोहानवी, पं. शान्तिप्रकाश जी, माननीय शरर जी, शहीद जी व सरशार जी की कतई चर्चा नहीं की। मनसाराम जी हरियाणा में ही जन्मे थे।

राजस्थान के इतिहास में पं. आर्यमुनि जी पर एक पृष्ठ न मिलेगा। ब्यावर और गंगानगर आर्यसमाज के इतिहास पर किसने दो-चार पृष्ठ लिखे हैं?

क्या में यहाँ पूज्य आर्यमुनि जी का राजस्थान सेवा का इतिहास सुनाऊँ। कविराजा श्यामलदास राजस्थान व देश के एक नामी इतिहासकार तथा आर्यसमाज के यशस्वी नेता थे। उन का नाम तक राजस्थान में वक्ता व लेखक नहीं लेते।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

- मन्त्री

स्वामी करपात्री जी-वेदार्थ-पारिजात और पं. श्री युधिष्ठिर मीमांसक-२

- डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

स्वामी करपात्रीजी के 'वेदार्थ-पारिजात' के उत्तर में आचार्य विशुद्धानन्द मिश्र ने वेदार्थ कल्पद्रुम की रचना तीन खण्डों में की। इसके बाद करपात्री मण्डली मौन साध गई। इधर कुछ दिनों से करपात्री जी के अनुयायी करपात्री जी को महिमा-मण्डित करने में लगे हैं, जिससे हमें कोई आपत्ति नहीं हैं, परन्तु महिमा-मण्डन के अतिरेक में मीमांसक जी के सन्दर्भ में मिथ्या-कथन किया जा रहा है। अत: मीमांसक जी से सन्दर्भित तथ्यों के उद्घाटनार्थ प्रस्तुत वक्तव्य पाठकों के समक्ष हम रख रहे हैं। इसका सन्दर्भ/स्रोत निम्न है

''वैदिक सिद्धान्त मीमांसा, भाग-२, लेखक-पं. श्रीयुधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ-१०-१६ (भूमिका), प्रथम संस्करण-१९९२ ई. प्रकाशक- रामलाल कपूर ट्रस्ट, रेवली (सोनीपत)

ऋ. भा. भूमिका के खण्डन में लिखा गया वेदार्थ-पारिजात

श्री स्वामी हरिहरानन्द जी करपात्री (करपात्र) ने स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित वेदविषयक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के खण्डन में वेदार्थ-पारिजात नाम का एक विशालकाय ग्रन्थ लिखा है। यह दो भागों में बृहद् आकार के २२७४ पृष्ठों में संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में मुद्रित हुआ है। इसके प्रथम भाग में दयानन्दमतखण्डनम् शीर्षक से पृष्ठ ४८४ से ७८८ तक ३०५ पृष्ठों में ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के 'ईश्वरप्रार्थनाविषय' से लेकर 'वेदसंज्ञाविचार-विषय' तक भाग का खण्डन छापा है। द्वितीय भाग में पृष्ठ ११६४ से १७४२ तक ५७६ पृष्ठों में 'ब्रह्मविद्याविषय' से लेकर 'अलङ्कारविषय' पर्यन्त भागों का खण्डन मुद्रित किया है। अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के खण्डन में श्री करपात्रीजी ने (३०५+५०६=) ८८४ पृष्ठ व्यय किए हैं।

कोई भी सचेता समर्थ विद्वान् किसी विद्वान् के मतों का खण्डन करते हुए अपने गौरव की रक्षा का ध्यान रखता है और अपने लेखन में पूर्ण सतर्कता बर्तता है, परन्तु यदि कोई असमर्थ व्यक्ति द्वेषबुद्धि से प्रेरित होकर किसी का खण्डन करता है, तो वह अपनी अयोग्यता या असमर्थता को छिपाने के लिए मर्यादा का ध्यान न रखकर साधारणजनों से प्रयुक्त किए जानेवाले प्रवाच्य अपशब्दों का प्राश्रय लेता है। जिस व्यक्ति के मतों का करपात्रीजी ने खण्डन किया है, वे चतुर्थाश्रमी थे और स्वयं करपात्रीजी भी संन्यासाश्रमी थे। सब एषणाओं से मुक्त होने का संकल्प करके ही कोई व्यक्ति संन्यास की दीक्षा ग्रहण करता है। ऐसी स्थिति में श्री करपात्रीजी द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती के लिए प्रयुक्त अपशब्दावली क्या 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे' कहावत को चरितार्थ नहीं करती? दूसरे शब्दों में यही कहा जा सकता है कि करपात्रीजी ने दयानन्दमत के खण्डन में अपने को असमर्थ पाकर अपशब्दरूपी बागाडम्बर के सहारे स्वगौरव को बचाने की चेष्टा की, परन्तु इससे उन्होंने न केवल अपनी आश्रम-मर्यादा का ही उल्लङ्घन किया, अपितु दयानन्द के खण्डन में अपनी असमर्थता भी प्रकट कर दी।

दयानन्दमत के खण्डन में करपात्रीजी असमर्थ रहे, यह मैं इसलिए कह रहा हूं कि ११ से १८ नवम्बर १९६४ में अमृतसर नगर में सम्पन्न हुए सर्ववेदशाखा-सम्मेलन में पुरी के शङ्कराचार्य श्री निरञ्जनदेव तीर्थ के सेनापतित्व में शतश: ग्रन्थरूपी दिव्यास्त्रों से सम्पन्न बीसियों महारथी पण्डितों से युक्त स्वदलीय महती सेना के बल पर भी श्री करपात्रीजी दयानन्द के एक तृतीय श्रेणी के मुझ जैसे एकाकी शस्त्र-रहित (ग्रन्थरहित) सेवक को दो दिन निरन्तर चलनेवाले शास्त्र-समर में पराजित नहीं कर सके। एक-के-बाद-एक महारथी

धराशायी होते रहे। वक्ता बदलते गए। उनके सेनापति श्री स्वामी निरञ्जनदेवजी तीर्थ को यह शास्त्रार्थ नहीं था, शास्त्रचर्चा थी। इसमें जय-पराजय का प्रश्न ही नहीं उठता' कहकर अपने घुटने टेकने पड़े। इस प्रकार इस शास्त्रार्थ की समाप्ति हुई। (इसकी साक्षी उस समय शास्त्रार्थ में उपस्थित पौराणिक मतस्थ जीवित व्यक्ति आज भी दे सकते हैं।) श्री करपात्रीजी की पराजय का एक प्रमाण यह भी है कि उक्त शास्त्र-समर से पूर्व श्री करपात्रीजी मुझे सदा सर्ववेदशाखासम्मेलन में निमन्त्रित करते रहे। इस सम्मेलन में भी मैं उनके निमन्त्रण पर ही अमृतसर पहुंचा था, परन्तु उक्त शास्त्रार्थ के परिणाम से श्री करपात्रीजी इतने भयभीत हुए कि उन्होंने सन् १९६४ के पश्चात् सम्पन्न होनेवाले किसी सम्मेलन में मुझे निमन्त्रित करने का साहस नहीं किया। क्या यह व्यवहार श्री करपात्रीजी के उक्त शास्त्र-समर में पराजित होने को उजागर नहीं करता ?

श्री करपात्रीजी ने दयानन्द के पचासों सेवकों में से जिन तीन को अपने खण्डन का लक्ष्य बनाया, उससे क्या उन्होंने प्रकारान्तर से उन्हें सम्मानित नहीं किया? पूज्य गुरुवर श्री पं. ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु के लेखों का खण्डन जिज्ञासुमत-समीक्षणम् शीर्षक से प्रथम भाग में पृष्ठ ७८६ से ८३४ तक ४६ पृष्ठों में किया है। तत्पश्चात् श्री पं. भगवद्दत्तजी के लेखों का खण्डन भगवद्दत्तखण्डनम् शीर्षक से पृष्ठ ८३४ से ६०८ तक ७५ पृष्ठों में लिखा है। मेरे लेखों का खण्डन युधिष्ठिर-मीमांसकमतखण्डनम् शीर्षक से द्वितीय भाग के पृष्ठ १८२४ से २१४१ तक ३१८ पृष्ठों में श्रुतिसंज्ञाविचारप्रत्याख्यानम्, आम्नायसंज्ञाविचारनिरासः, मन्त्रविनियोग-विमर्शः, देवयोनिः, गोमेधः और श्रौतयज्ञमीमांसा उपशीर्षकों से लिखा है। सम्भवतः मेरे लिए इतने अधिक पृष्ठों को काले करने का कारण अमृतसर में हुई अपनी सदल पराजय की खीझ को मिटाना रहा हो। इस प्रकरण के अतिरिक्त ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका खण्डन के साथ-साथ भूमिका पर लिखी गई टिप्पणियों के खण्डन में बहुत कुछ लिखा है।

श्री करपात्रीजी ने आर्यसमाज के सर्वमान्य पूज्य व्यक्ति के प्रति अवाच्य शब्दों की झड़ी लगाकर आर्यसमाजियों को कुपित करने का निमन्त्रण दिया, परन्तु करपात्रीजी के वेदार्थ-पारिजात के खण्डन में जो ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं, उनके लेखकों ने आर्यमर्यादा का पूर्णतया पालन करते हुए कहीं पर भी करपात्रीजी जैसे चतुर्थाश्रमी के प्रति अभद्र शब्द का प्रयोग नहीं किया। इस दृष्टि से भी श्री करपात्रीजी अपने अनार्यजुष्ट कार्य से लौकिक व्यवहार में भी पराजित हुए, यह स्पष्ट है।

करपात्रीजी के मतानुसार वेदों का प्रयोजन केवल द्रव्यमय यज्ञ ही है। इनमें गो, अश्व, अज आदि लोकोपयोगी पशुओं को मारकर उनके अंगों के होम करने का विधान है। इस कारण यज्ञशेष के रूप में यजमान और ऋत्विजों को मांसभक्षण करने के लिये बाधित होना पड़ता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने मध्यकालीन अवैदिक परम्पराओं का खण्डन किया, इससे श्री करपात्रीजी अधिक कुपित नहीं थे; अपितु उनका स्वामी दयानन्द सरस्वती पर कोप का प्रधान कारण था- वेद को समस्त विद्याओं का आकर ग्रन्थ मानना और वेदमन्त्रों द्वारा विविध विद्याओं को प्रमाणित करना। (यह रहस्य मुझे अमृतसर में हुए शास्त्रार्थ में विदित हुआ था।)

मेरे विविध लेखों का खण्डन जिस व्यक्ति से लिखाया गया है, वह निश्चय ही मीमांसाविषयक मध्यकालीन परम्परा के अच्छे ज्ञाता हैं, परन्तु वे परम्परागत शुद्ध-अशुद्ध मिश्रित विचारधारा से इतने प्रभावित हैं कि उनमें सत्य असत्य के निर्णय की बुद्धि सर्वथा कुण्ठित हो गई है। अथवा गतानुगतिको लोको न लोकः पारमार्थिकः नियम के अनुसार लोकलज्जावश सत्य को प्रकट करने की उनमें शक्ति नहीं है। अन्यथा यज्ञ में अपने हाथ से मारे गए पशु के सम्बन्ध में न उ वा एतन्नियसे (ऋ. १/

१६२/२१) मन्त्र को उद्धृत कर यह कहना कि 'यह मरा नहीं है', कहां तक उचित है? मेरे खण्डन में मीमांसा को आगे करके जो कुछ लिखा गया है, उससे ज्ञात होता है कि लेखक मीमांसा-शास्त्र के विविध ग्रन्थों और मतों से परिचित नहीं है। इसका एक ही उदाहरण देना पर्याप्त होगा। मैंने मीमांसा-शाबरभाष्य-व्याख्या के आदि में लिखे गए श्रौतयज्ञमीमांसा में विकृति यज्ञों के उदाहरणों में "दाक्षायणेष्टि" का उल्लेख किया था। इस पर लेखक ने वाक्छल का आश्रय लेकर लिखा है- "दाक्षायण याग है, इष्टि नहीं है।" परन्तु मीमांसा अध्याय २, पाद ३ के चतुर्थ दाक्षायणादीनां गुणताधिकरणम् के शाबरभाष्य के अनुसार दर्शपौर्णमासेष्टि में ही गुणान्तराधानरूप दाक्षायण याग है। अब विचारना चाहिए कि दाक्षायण यज्ञ को स्वतन्त्र याग न मान कर दर्शपौर्णमास में गुणान्तराधानरूप माना गया है। जब दर्शपौर्णमास के लिए इष्टि शब्द का प्रयोग सर्वसम्मत है तब उसी इष्टि में कुछ गुणान्तराधान से निवर्तित नाममात्र से भिन्न दाक्षायण यज्ञ के लिए इष्टि शब्द का प्रयोग करना क्यों कर अशास्त्रीय हो सकता है? शाबरभाष्य आदि के अनुसार दाक्षायण यज्ञ स्वतन्त्र यज्ञ नहीं है। अब रही दाक्षायणेष्टि को विकृतियाग के रूप में उदाहृत करने की बात। जो लोग दाक्षायण याग को स्वतन्त्र याग नहीं मानते, उनके मत में तो दाक्षायणेष्टि को विकृति याग के रूप में उपस्थित करना अशुद्ध हो सकता है, परन्तु जिन्होंने मीमांसाशास्त्र के विविध ग्रन्थों का अध्ययन किया है, वे जानते हैं कि कुमारिलभट्ट के अनुयायी विविध महायज्ञों के माहर्ता वासुदेव दीक्षित ने अपनी 'कुतूहलवृत्ति' में दाक्षायण यज्ञ को उक्त अधिकरण का विषय ही नहीं बनाया। उसने अनेक प्रमाणों के द्वारा यह सिद्ध किया है कि दाक्षायणयाग विकृतियाग है, क्योंकि कौषीतकिब्राह्मण में दर्शपूर्णमास के विधान के अनन्तर अनेक इष्टियों का विधान करके दाक्षायणेष्टि का विधान किया गया है। इससे स्पष्ट है कि दाक्षायणेष्टि का पौर्णमासेष्टि के साथ सम्बन्ध न होने से यह विकृतियाग है। यत: तैत्तिरीय संहिता में दर्शपौर्णमासेष्टि के साथ ही दाक्षायणेष्टि का विधान है, अत: तैत्तिरीयशाखाध्येताओं को यह भ्रम हुआ है कि दाक्षायणेष्टि दर्शपौर्णमास में गुणान्तराधानरूप है, स्वतन्त्र इष्टि नहीं है। यहां यह भी ध्यान देने योग्य है कि वासुदेव दीक्षित स्वयं तैत्तिरीयसंहिताध्यायी था।

वेदार्थपारिजात की प्रस्तावना के लेखक ने लिखा है- रामायणकालात् प्रागेव कठतैत्तिरीयशाखाध्यापिन आसन्निति महर्षिवाल्मीकेरादिकवेर्वचनाद् अवगच्छम:।' (पृष्ठ ७)

इस प्रस्तावना के लेखक प्रसिद्ध मीमांसक हैं। शबरस्वामी आदि मीमांसकों के मत में यद्यपि सभी शाखाएं नित्य हैं, परन्तु इनके साथ सम्प्रति जिस नाम का सम्बन्ध है, वह सम्बन्ध द्वापर के अन्तिम काल में भगवान् कृष्णद्वैपायन के शिष्य वैशम्पायन और उसके शिष्य-प्रशिष्यों द्वारा पूर्वत: विद्यमान शाखाओं के विशेष प्रवचन के कारण है। यह आख्या प्रवचनात् (मी. १।१।३०) के शाबरभाष्य से स्पष्ट है। अत: जब नेता में कठ तैत्तिरीय श्रादि शाखाप्रवचनकर्ता उत्पन्न ही नहीं हुए थे, तो उस काल में कठ-तैत्तिरीय शाखाध्येताभों की पता कैसे सम्भव है? अत: रामायण अयोध्याकाण्ड के सर्ग ३२ के १५ से १८ तक के श्लोक, जिनमें कठ तैत्तिरीय शाखाओं के नाम आये हैं, इतिहासविरुद्ध होने से किसी कृष्णयजुर्वेदी ने स्वशाखाओं की प्राचीनता सिद्ध करने के लिये प्रक्षेप किया है। आश्चर्य है कि मीमांसाशास्त्र के विशिष्ट विद्वान् ने अपने शास्त्र के सिद्धान्त की अवहेलना कैसे की, यह समझ में नहीं आता। सम्भव है उन्होंने इतिहास का ज्ञान न होने से यह भूल की है। रामायण के शोधपूर्ण बड़ोदरा के विशिष्ट संस्करण के सम्पादक ने भी इतिहास का ज्ञान न होने से अथवा सम्पादन में उसका प्राश्रय न लेने से इन श्लोकों को अपने संस्करण में स्थान दिया। यह है इतिहास की अवहेलना करने का फल। इस विषय में 'वैदिक-सिद्धान्त-मीमांसा।' के इसी भाग में पृष्ठ २८१-

२८२ देखें।

मेरे व्यक्तिगत विषय में जो कुछ लिखा है, उसका आशय यह है कि 'श्री स्व. पं. चिन्नस्वामीजी को यह आशंका भी नहीं थी कि मैं इन्हें मीमांसाशास्त्र नहीं पढ़ा रहा, अपितु आस्तीन में सांप पाल रहा हूं।' वास्तविकता इससे सर्वथा विपरीत है। पूज्य गुरुवर्य तो कितने उदारचरित थे, इस विषय में एक घटना की ओर संकेत करना उचित होगा। एक दिन पढ़ाते हुए पूज्य गुरुवर्य ने कहा कि ''माध्व सम्प्रदाय के आचार्यों ने द्वैतमत की सिद्धि के लिए अनेक ऐसी जाली श्रुतियां बना लीं, जो कहीं नहीं मिलतीं।'' इस पर मैंने विनम्रतापूर्वक गुरुजी से कहा कि माध्व सम्प्रदाय के राघवेन्द्राचार्य ने मन्त्रार्थ-मञ्जरी में लिखा है कि ''हमारे आचार्यों पर जाली श्रुतियां गढ़ने का दोष इसलिए लगाया जाता है कि वे सम्प्रति किसी ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं होतीं। शाङ्करभाष्य और शाबरभाष्य में भी ऐसी बहुत-सी श्रुतियां हैं, जो किसी प्रन्थ में नहीं मिलतीं। क्या वे भी जाली हैं?'' मेरे इस कथन को सुन-कर गुरुवर्य ने न तो उस समय भी न कालान्तर में कभी मुझपर अप्रसन्नता प्रकट की। इतना ही नहीं, इस घटना के पश्चात् मैंने अनुभव किया कि पूज्य गुरुजी का मुझपर स्नेह अधिक बढ़ा। इसका कारण मैं समझता हूं कि वे यह समझ गए थे कि युधिष्ठिर सामान्य विद्यार्थी नहीं है; अपितु इसे अनेक विषयों का ज्ञान है। इस स्थिति में पूज्य गुरुवर यह सोच ही कैसे सकते थे कि ''मैं आस्तीन में सांप पाल रहा हूं।''

लेखक ने मुझ पर गुरुवर्य के मत के खण्डन के कारण गुरुद्रोह करने का आरोप लगाया है। मीमांसा के भाट्टमत के अनुयायी व्यक्तियों ने एक-दूसरे का इतना खण्डन किया है कि उसमें से सत्य को पाना कठिन है। फिर भी सभी अपने को भाट्टमतानुयायी मानते हैं। इतना ही नहीं, भाट्टमत के प्रसिद्ध अनुयायी खण्डदेव ने मीमांसा पर भाट्टदीपिका नामक एक ग्रन्थ लिखा है। यह मीमांसकों में विशेषरूप से आदृत है।

खण्डदेव के शिष्य शम्भुमट्ट ने 'भाट्टदीपिका' पर प्रभावती नाम्नी व्याख्या लिखी है। शम्भुभट्ट ने अपनी व्याख्या में स्वगुरु खण्डदेव के मतों का बहुत्र प्रत्याख्यान किया है। यह उल्लेख शम्भुभट्ट ने अपनी व्याख्या के आरम्भ में स्वयं लिखा है। इतना होने पर भी किसी मीमांसक ने खण्डदेव को गुरुद्रोही नहीं कहा, क्योंकि विद्वज्जनों की मान्यता है, ''वादे वादे जायते तत्त्वबोधः।'' ऐसी अवस्था में यदि मैंने पूज्य गुरुवर्य की किसी मान्यता के विपरीत भी लिखा है, तो मैंने कोई अपराध नहीं किया। इतना ही नहीं, मेरी अपनी मान्यता है कि यदि पूज्य गुरुदेव जीवित होते तो मैंने मीमांसाशास्त्र पर जो गुरुतर कार्य किया है, उससे अवश्य प्रसन्न होते। यदि पौराणिक मतानुसार कहा जाय तो पूज्य गुरुवर स्वर्ग में बैठे हुए मीमांसा-सम्बन्धी कार्य पर मुझे आशीर्वाद दे रहे हैं। वैसे भी गुरुजनों का आशीर्वाद मुझे सदा प्राप्त होता रहा है, इसी कारण मैं अपने लक्ष्य में सफल हुआ हूं और शरीर के जीर्ण शीर्ण होने पर भी लक्ष्य की ओर मन्द गति से बढ़ रहा हूं।

श्री करपात्रीजी द्वारा विशेष सम्मानित तीन आर्यलेखक

पौराणिक जगत् में भक्ति का एक स्वरूप 'द्रोह करना' भी माना गया है। इतना ही नहीं, जहां आराधना या स्तुतिरूप भक्ति से भक्त को संसिद्धि में अनेक जन्म व्यतीत करने पड़ते हैं', यहां द्रोहात्मक भक्ति में संसिद्धि अल्पकाल में हो जाती है। भागवत पुराण के दशम स्कन्ध के ७८वें अध्याय से विदित होता है कि शिशुपाल को 'द्रोहरूप' भक्ति से तीन जन्म में ही परमधाम की प्राप्ति हो गई थी। अतः यह कहा जाए कि पुराणों के मतानुसार आराधना या स्तवनरूपभक्ति से द्रोह-भक्ति सरल और उत्तम है, तो अत्युक्ति नहीं होगी।

इस दृष्टि से किसी को सम्मानित करने के भी दो मार्ग हैं। एक-जिसको सम्मानित करना हो उसके गुणों वा उत्तम कार्यों का बखान करना और दूसरा- उसकी

निन्दा करना अथवा सर्वाङ्गसुन्दर कार्य में मक्षिका-निकर के समान व्रण खोजना, न्यूनतादर्शन के लिए खण्डन करना। श्री करपात्रीजी भागवत के प्रसिद्ध कथाकार थे, अतः उन्होंने 'द्रोह-भक्ति' के समान दयानन्द के प्रति अपशब्द लिखना, निरर्थक दोष-निदर्शन वा खण्डन करना रूप सम्मान-विधि का आश्रय लिया है। संराध्य के साथ उसके सेवकों की भक्ति भी पौराणिक भक्तिशास्त्र में आवश्यक मानी गई है। जैसे रामभक्त राम के सेवक हनुमान की भी भक्ति करते हैं। इसी प्रकार अपनी विशिष्ट सम्मान-विधि के अनुरूप दयानन्द का तो सम्मान किया ही, दयानन्द के तीन सेवकों को भी सम्मानित करके यह प्रमाणित कर दिया कि उनकी दृष्टि में आर्यसमाज में दयानन्द के वास्तविकरूप में तीन ही विशिष्ट सेवक हैं। अस्तु।

१. अनेकजन्मसंनिद्धस्ततो याति पराङ्गतिम्। गीता ६/४५

२. जन्मत्रयानुगुणितवै रसं रब्धया धिया। ध्यायंस्तन्मयतां यातो भावो हि भवकारणम्।। श्लोक ४६

२. द्र.- संस्कृत-साहित्य का आरम्भ ऋग्वेद से होता है और उसकी समाप्ति स्वामी दयानन्द की ऋग्वेदादिमाष्यभूमिका पर होती है। (मैक्समूलर के हम भारत से क्या सीखें के नाम से संकलित भाषणों के तृतीय भाषण में, पृष्ठ १०२)

३. श्री पं. विशुद्धानन्द मिश्र शास्त्री जी वेदार्थपारिजात के खण्डन में वेदार्थ-कल्प-द्रुम ग्रन्थ लिख रहे हैं। प्रथम भाग छप चुका है, द्वितीय छप रहा है, तृतीय भाग भी लिखा जा चुका है। डॉ. श्री ब्रह्मानन्द शर्माजी वेदार्थपारिजात के खण्डन में 'वेदार्थ-विमर्श' ग्रन्थ लिख रहे हैं। यह 'परोपकारी' पत्र में क्रमशः प्रकाशित हो रहा है। एक भाग पुस्तकाकार में छप चुका है।

४. विशेष द्रष्टव्य - आत्म-परिचय, पृष्ठ १६०, १६१ (द्वितीय संस्करण)

अमेठी (उ.प्र.) मो. ७३०३४७४३०१

*** निवेदन ***

कीर्तिशेष आचार्य धर्मवीर जी ने अपने दानदाताओं के सहयोग से ऋषि उद्यान में निरन्तर चलने वाले ऋषि लंगर की व्यवस्था की थी, जो सतत संचालित हो रही है। इसमें ऋषि उद्यान की वृहद् भोजनशाला में **ऋषि उद्यान में निवास करने वाले योगसाधकों, संन्यासियों-वानप्रस्थियों, ब्रह्मचारियों व आचार्यों के भोजन, दुग्ध, फल इत्यादि की व्यवस्था की जाती है।**

ऋषि उद्यान में आने वाले अतिथियों, विद्वानों, दर्शनार्थियों इत्यादि के निवास तथा भोजनादि की व्यवस्था इसके अन्तर्गत संचालित की जाती है।

आर्य दानदाता-परिवारों के सहयोग से ही यह अतिथि-यज्ञ सम्भव हो पा रहा है। अतः हम सभी आर्य परिवारों का दायित्व एवं कर्त्तव्य है कि हम इस यज्ञ में होता बनकर निरन्तर दान-रूपी आहुति प्रदान कर पुण्य के भागी बनें। विभिन्न संस्कारों एवं अन्य शुभावसरों पर अपनी दान-रूपी आहुति देना न भूलें, ताकि यह लोकोपकारी अतिथि यज्ञ निरन्तर चलता रहे।

इस अतिथि यज्ञ हेतु आप **५१००/-(पाँच हजार एक सौ रुपये) प्रतिवर्ष** भेजकर अपना सहयोग प्रदान कर अनुग्रहीत करें।

ओम्मुनि
प्रधान

कन्हैयालाल आर्य
मन्त्री

ज्ञानसूक्त - १९

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्या

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी शृंखला में ऋग्वेद १०/७१ 'ज्ञानसूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।

-सम्पादक

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः।
आदध्नास उपकक्षास उत्वे ह्रदा इव स्नात्वा उत्वे ददृश्रे।।

हम ऋग्वेद के दशम मण्डल के ज्ञानसूक्त की चर्चा कर रहे हैं। इस सूक्त का ऋषि बृहस्पति औरदेवता ज्ञान है। हमने गत मन्त्रों में देखा ज्ञान का क्या महत्त्व है और ज्ञान से हमें क्या लाभ होता है, उससे वंचित रहने पर हमें क्या हानि होती है। ज्ञान और ज्ञानवान व्यक्ति हमारे सखा हैं, हमारे सहयोगी है। उनके न होने से हमें कष्ट होता है, अन्धकार की प्राप्ति होती है, अज्ञान से हम ग्रसित होते हैं।

अगले मन्त्र में एक विशेष बात कही है और यह मन्त्र बहुत प्रसिद्ध भी है, सरल भी है। सामान्य रूप से इस मन्त्र में 'अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो...उत्वेदद्दश्रे' उदाहरण दे करके एक बात कही गयी है कहा कि जो सीखने वाले हैं, पढ़ने वाले हैं, दुनिया में पैदा हुए लोग हैं, उनके पास जो जानने के, काम करने के साधन हैं, वो सब हमें एक जैसे दिखाई देते हैं, एक जैसे होते भी हैं। कोई मनुष्य पैदा होता है तो उसके सारे शरीर में कमेन्द्रियाँ- हाथ-पैर और ज्ञानेन्द्रियाँ- आँख, कान, नाक आदि एक जैसी होती है। जिनकी नहीं होती वे अपवाद होते हैं नियम तो यही है कि सबके पास समान रूप से यह साधन प्राप्त होते हैं। ये साधन शरीर के चालने के लिए, ज्ञान की प्राप्ति के लिए भगवान् ने हमें दिए हैं। जो हमारी कर्मेन्द्रियाँ हैं वो कर्म करने पर भी ज्ञान में सहायक होने से ज्ञान के लिए उपयोगी हैं। उन कर्मेन्द्रियों के बिना हम ज्ञानेन्द्रियों से पूरा लाभ नहीं उठा सकते। हम कहीं पढ़ने जा रहे हैं तब हमारा जाना, हम लिख रहे हैं तब हाथ से लिखना यह सारी जो हमारी कर्मेन्द्रियाँ है उनका भी ज्ञान के लिए भरपूर उपयोग होता है। इसके साथ जो ज्ञानेन्द्रिया हैं वो कर्मेन्द्रियों की अपेक्षाकृत हमारे ज्ञान में अधिक उपयोगी हैं। जो महाभूत हैं, उनके विषय हैं उनके विषयों के अनुसार इन्द्रियाँ हैं। इनमें एक सम्बन्ध है। जो संसार बना है, उसको हम पाँच भागों में बाँटते हैं। पृथ्वी है, जल है, तेज है, वायु है और आकाश है। स्थूल संसार में जो पदार्थ हमें दिखाई दे रहे हैं, जो पाँच हमको दिखाई सकने वाले पदार्थ हैं, उनको मह महाभूत कहते हैं। इन्हें महाभूत तो हम इसलिए कहते हैं कि इससे पहले जो एक शब्द आता है, सृष्टि रचना की प्रक्रिया में, वो है सवूक्ष्म भूत। अर्थात् इससे पहले की रचना। उससे पहले क्या था, यह इस समय हमारे विचार का विषय नहीं है किन्तु जो चीज हमारे सामने उपस्थित है, दिखाई दे रही है हम उसके आधार पर यह चर्चा कर रहे हैं। तो हमें संसार में जो पाँच पदार्थ हैं वो पृथक्-पृथक् दिखाई देते हैं और जो कुछ हमें संसार में मिला हुआ दिखाई देता है, वह इन पाँच पदार्थों के मिने से ही बना हुआ है। इसलिए हमको जो ज्ञान भी होना है वो इनके पाँच का ही होना

है। तो हमको परमेश्वर ने एक व्यवस्था दी है दुनिया में जितनी चीजें हैं सारी आपको देखनी हैं। सबको आपको जानना है। सबको आप कैसे जानेंगे? एक तरीका होता है कि एक इन्द्रिय से ही हम सबको जान लेते। लेकिन ऐसा नही है। तो दूसरा प्रकार यह होत है कि एक-एक से एक-एक को जाने। तो पृथ्वी है, जल है, तेज है, वायु है और आकाश है, तो यह पाँच पदार्थ हैं जिन्हें हम पाँच महाभूत कहते हैं और संसार क्योंकि इन्हीं से बनता है इसलिए भौतिक कहलाता है और पाँच भूतों से बनता है इसलिए पंच भौतिक कहते हैं। तो यह जो भूत हैं उनको जानने के लिए, जैसा मैंने निवेदन किया, कि एक-एक भूत से बने हुए पदार्थों का जो एक-एक विषय है, उनको जानने के लिए भगवान् ने हमारे पास जो साधन दिए हैं उनको हम ज्ञानेन्द्रियाँ कहत हैं और जैसे हमारे पाँच महाभूत हैं, तो हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं तो पाँच महाभूतों का होना और पाँच ज्ञानेन्द्रियों का होना यह दोनों की पाँच जो संख्या है, यह बता रही है कि इन दोनों में, आपस में सम्बन्ध है। वह सम्बन्ध यह है कि हर इन्द्रिय से हर विषय में नहीं जाना जा सकता। जैसे हम कान से शब्द सुनते हैं, लेकिन हम कान से देखना चाहें तो नहीं देख सकते। कान से सूँधना चाहें तो सूँध नही सकते। कान से चखना चाहें तो चख नही सकते। कान से, स्पर्श इन्द्रिय का भी उस तरह से लाभ हमको नहीं होता, जैसा शब्द का होता है। कान से एक ज्ञान होता है, 'शब्द का'। तो यह जानना कि जा शब्द है उसका सम्बन्ध भी भूत से अवश्य होना चाहिए। तो जिस महाभूत का जो विषय होता है,तो उस विषय को जानने वाली वही इन्द्रिय भी होती है। तो हमारे लिये यहाँ हमारा विचार बना कि श्ब्द कौन से महाभूत का विषय है- कान उसकी इन्द्रिय कहलाई। तो क्या शब्द पृथ्वी का विषय हो सकता है? क्या शब्द, अग्नि का, जल का या वायु का विषय हो सकता है? एक बार तो ऐसा लगेगा जैसे शायद इनमें से किसी का हो, या किसी का कुछ-कुछ हो। जिधर से हवा चलती है, उधर से हमको शब्द सुनाई देता है, यदि हवा उलटी चले ता सुनाई नहीं देता। जल के अन्दर डूब रहते हैंतो दूरतक क शब्द हें सुनाई देता है, जल में चलने वाली तरंगे हमें सुनाई देती हैं तो हमें लगता है शायद जल ही शब्द का साधन है। किन्तु जब हम निर्णय करते हैं तो मूल रूप मेंशब्द जो है आकाश का गुण है और आकाश के गुण से ही, आकाश में शब्द की गति है। यदि आकाश या अवकाश न हो तो शब्द का उत्पन्न होना और शब्द का गति करना, शब्द का सुनाई देना, यह सब कुछ भी सम्भव नहीं होता। इसलिए आकाश का गुण शब्द है और उसकी इन्द्रिय कान है। तो जैसे आकाश महाभूत, कान इन्दय और शब्द उसका विषय। ऐसा हमारी सब इन्द्रियों का सम्बन्ध सब भूतों से है। जैसे कान का सम्बन्ध शब्द और आकाश से जुड़ा, तो वैसे ही आँख या नेत्र इन्द्रिय है, इसमें दृष्टि या दर्शन की शक्ति है, दिखखनेाला जो गुण है उसे हम रूप कहते हैं और वह रूप कौन से महाभूत का विषय है? तो पता लगता है जहाँ प्रकश है, वहाँ रूप उद्धृत हेता है। तो रूप अग्नि महाभूत का विषय है। रूप अग्नि से ही प्रकट होता है। इसलिए अग्नि से बनी हुई जो इन्द्रिय है, जिसे हम आँख कहते हैं, चक्षु कहते हैं, उससे अग्नि का सम्बन्ध है, उससे जाना जाता है। तो जैसे आकाश उसका गुण है शब्द और उसको जानने वाली इन्द्रिय है श्रोत्र। कान वैसे ही एक महाभूत है अग्नि उसका गुण है रूप और उसको जानने का साधन है नेत्र या आँख। वास्तव में, त्वचा, आँख, नाक, कान भी अपने आप इन्द्रिय नहीं है। इन्द्रिय तो एक सामर्थ्य का नाम है, जो इस साधन से प्रकट होता है। तो इन्द्रिय जो सामर्थ्य है, जैसे यप का जो सामर्थ्य है वो आँखों से प्रकट होता है, शब्द का सामर्थ्य कान से और स्पर्श का सामर्थ्य त्वचना से और उसी तरह से हमारे यहाँ एक और ज्ञानेन्द्रिय है जिसे हम घ्राण या नासिका कहते हैं तो गन्ध की प्रतीति हमें नासिका से होती है और जैसे आकाश

का शब्द से, रूप का अग्नि से त्वचा का वायु से, उसी प्रकार गन्ध को पृथ्वी के अन्दरर एक गुण है उससे पृथ्वी की पहचान होती है। जल से रस की होती है। तो हमारे अन्दर रस का जो भाव है वो जिह्वा में है और जिह्वा में जो अनुभूति होती है वो तब तक नहीं हेती है जब तक वह रसीली नहीं होती है। स्पर्श का गुण वायु का है। इसे हम क्रमशः देख सकते हैं- आकाश का शब्द गुण है और श्रोत्र इन्द्रिय है। अग्नि का रूप गुण है और नेत्र इन्द्रिय है। जल का गुण रस है, जिह्वा इन्द्रिय है। वायु का गुण स्पर्श है, त्वचा उसकी इन्द्रिय है। पृथ्वी का गुण गन्ध है और नासिका उसकी इन्द्रिय है।

अर्थात् ज्ञान का जो साधन हमें परमेश्वर ने दिया, व इन्द्रियों के रूप में दिया। इन इन्द्रियों के द्वारा हम जनते और समझते हैं। यह भूमिका इसलिए बनाई कि मन्त्र में ज्ञान के दो साधन गिनाए हैं। मन्त्र कहता है 'अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायः' जो सखा है, मित्र है उन सबके पास सब इन्द्रियाँ हैं। उनके पास आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा सब है। वो समान हैं, लेकिन वे समान होने पर भी ज्ञान का जो पक्ष है वो भिन्न-भिन्न आ रहा है। इसके लिए वो कहता है कि ज्ञान के जो प्रमुख साधन हैं, यहाँ पाँच न गिनाकर दो ही गिनाए हैं- वो अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः कहा। यहाँ पाँच क्यूँ नहीं कहा? तो आपको यह पता लगेगा कि यहाँ दो कहने का अभिप्राय है कि अधिकांश में जितना ज्ञान होता है और इन्द्रियों की अपेक्षा से इन दो इन्द्रियों से ही अधिक होता है। तो ज्ञान प्राप्ति में आँख और कान विशेष स्थान रखते हैं। हम आँखों से और कानों से कैसे ज्ञान प्राप्त करते हैं? तो आप देखेंगे कि जब हम कक्षा में बैठते हैं, श्रोता के पास सुनने के लिए बैठते हैं, तब हमारी यह दोनों इन्द्रियाँ ही लगातार काम करती रहती हैं। इसमें एक ध्यान देने की बात यह है कि इन कान और आँख के बीच में इतना अधिक सम्बन्ध है कि जब हम कुछ सुनना चाहते हैं तो कान उस दिशा में अपने आप नहीं जाता बल्कि उसमें एक विशेष बात होती है कि जब हमारा ध्यान केन्द्रित होता है, हम कोई चीज सुनते हैं तो हमारी दृष्टि सहज भाव , जहाँ से शब्द आ रहा हे, उस पर जाती है और इस तरह से नेत्र और श्रोत्र एक जगह बँध जाते हैं। अर्थात् हमारे सुनने का, हमारे एकाग्र होने का जो प्रमाण है, वो हमारे नेत्र होते हैं। हम किसी की बात को ठीक सुन रहे हैं या किसी की बात को नहीं सुन रहे हैं, इसका प्रभाव हमारी आँख हो जाती है। जब विद्यार्थी अध्यापक की बात को सुनता हुआ होता है तो उसके नेत्र भी अध्यापक पर होते हैं और जब वह अन्यमनस्क होता है, उसका ध्यान बँटा हुआ होता है तब की दृष्टि अध्यापक पर नहीं होती है। इस तरह से जब आप देखेंगे तो यहाँ पर जो दो इन्द्रियों को ज्ञान का विशेष रूपसे साधन बताने की बात आयी है उसका महत्त्व हमारी समझ में भली प्रकार आ जायेगा।

आर्य संस्थाओं से आग्रह

आर्य समाज एवं अन्य आर्य संस्थाएं अपने निर्वाचन, वार्षिकोत्सव और योग शिविर आदि आयोजन के संक्षिप्त समाचार परोपकारी में प्रकाशनार्थ भिजवा सकते हैं।

वैचारिक क्रान्ति के लिये सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

वैदिक युग के स्वप्नद्रष्टा महर्षि दयानन्द सरस्वती

रामनिवास 'गुणग्राहक'

बालक मूलशंकर के प्रतिभाशाली मन-मस्तिष्क से शिवरात्रि की बौद्धिक उथल-पुथल के बाद महर्षि दयानन्द का जन्म होना स्वीकार कर लें, तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। सच्चे शिव की खोज की लालसा का जन्म ही सच्चे अर्थों में महर्षि दयानन्द का जन्म कहा जा सकता है। बहिन और चाचा की मृत्यु से लेकर दो बार घर त्यागने में जो शारीरिक और मानसिक यातनाएँ सहन करनी पड़ीं, उन सबको प्रसव पीड़ा का नाम देना ही उचित होगा। इन सबके बाद विलक्षण प्रतिभा के धनी स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जी ने नामकरण संस्कार करके उस नवजात को स्वामी दयानन्द सरस्वती नाम दिया। यहाँ से स्वामी दयानन्द सरस्वती की जीवन यात्रा शुरु होती है। जिस सच्चे शिव की खोज करने और बहिन व चाचा की मृत्यु के बाद मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की धुन लेकर वे निकले थे, इसकी सिद्धि करने की योग्यता पाने के लिए लगभग चौदह वर्ष भटकने के बाद स्वामी दयानन्द को स्वामी विरजानन्द दण्डी जी के रूप में ऐसे गुरु मिले जिन्हें पाकर स्वामी दयानन्द को लगा कि यहां मुझे सच्चा ज्ञान मिल सकता है। सुधि पाठक! यह सच है कि स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जी ने उन्हें नामका दयानन्द बना दिया था मगर उन्हें काम का दयानन्द तो स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी ने ज्ञान देकर ही बनाया। लगभग तीन वर्ष तक गुरुगृह में रहकर पाणिनि की अष्टाध्यायी पद्धति से आर्ष व्याकरण पढ़कर जब विद्या-निधि से उनकी प्रतिभा पोषित-पल्लवित होकर अपना मार्ग खोजने में समर्थ हो गई तो वे उस विद्या को व्यवहार के धरातल पर परखने पचाने के लिए निकल पड़े।

विद्या की सफलता और सार्थकता व्यवहार में ही है। '**हतं ज्ञानं क्रियाहीनम्**' के अनुसार अव्यावहारिक कोरा ज्ञान नष्ट हो जाता है। स्वामी दयानन्द ने तो मूलशंकर के रूप में ही जब पिता द्वारा बताये गये गुण शिवपिण्डी में नहीं दिखे तो प्रश्नोत्तर करके सन्तोषप्रद उत्तर न मिलने पर विद्रोह करके यह प्रकट कर दिया था कि उनके लिए व्यवहार में सुखद सफल विद्या ही सच्ची विद्या है। उन्हें अपने गुरु स्वामी विरजानन्द जी से आर्ष-अनार्ष ग्रन्थों की कसौटी प्राप्त हो चुकी थी। आगरा प्रवास में कुछ लोगों के विशेष आग्रह पर आपने विद्यारण्य स्वामी कृत 'पञ्चदशी' की कथा प्रारम्भ की। कथा करते हुए एक स्थान पर आया कि ईश्वर को भी भ्रम हो जाता है। बस फिर क्या था- कथा को वहीं त्याग दिया और लोगों के विशेष आग्रह पर भी कथा में प्रवृत्त नहीं हुए। उनकी सत्यनिष्ठा ही एकमात्र ऐसा गुण हो सकता है, जिसे धारण करके हम आर्य कहलाने वाले उनके सच्चे भक्त बन सकते हैं। सत्य के ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिए तत्पर रहने का आदेश देने का अधिकारी वही हो सकता है, जो स्वयं असत्य से एक क्षण मात्र भी समझौता न करे। महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण जीवन इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

सच्चे शिव को पाने और मृत्यु भय को जीतने के लक्ष्य को लेकर निकले स्वामी दयानन्द को जब आर्ष विद्या के प्रचार-प्रसार और देश को दुर्गति से निकालने की तड़प से व्याकुल गुरु विरजानन्द जी ने उन्हें अपनी लक्ष्य सिद्धि के लिए जीवन समर्पित करने को कहा तो कृतज्ञ स्वामी दयानन्द ने एक पल का विलम्ब न किया। वैदिक संस्कृति का स्वर्णिम सिद्धान्त 'आत्म कल्याण के बाद ही जनकल्याण' की सिद्धि की प्रेरणा देता है। स्वामी दयानन्द ने यही पुण्य पथ स्वीकार किया। ऋषिवर का जीवन साक्षी है कि उन्होंने गुरु जी द्वारा प्राप्त प्रेरणा के अनुसार केवल अपने राष्ट्रहित ही नहीं, विश्व हित के लिए जीवन लगाकर सच्चे शिव अर्थात् कल्याणकारी परमात्मा को पा लिया, मृत्यु भय से भी मुक्ति प्राप्त कर ली तथा राष्ट्रोद्धार की न केवल सैद्धान्तिक वरन् व्यावहारिक

रूपरेखा भी प्रस्तुत कर दी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बीस वर्ष के स्वल्प काल में देश, धर्म व समाज के लिए जो किया, जितना किया, जिस सफलता के साथ किया, विश्व इतिहास में वैसा उदाहरण दूसरा नहीं मिलता। महर्षि दयानन्द के जीवन और उनके अवदान को लेकर एक बड़ी काव्य रचना लिखी है। उसकी दो पंक्तियों में ऋषि जीवन की समग्र उपलब्धियों को समेटने का प्रयास करते हुए लिखा है-

व्यक्ति से लेकर विश्वस्तर,
और जन्म से लेकर मरने तक।
हर उलझन ऋषि ने सुलझाई,
घर करने से भव तरने तक।।

अर्थात् व्यक्ति के जीवन निर्माण से लेकर सम्पूर्ण मानवता का हित चिन्तन करने वाले ऋषि दयानन्द ने मानव की जन्म से मृत्यु पर्यन्त आने वाली हर उलझन को सफलता पूर्वक सुलझाया। इतना ही नहीं, गृहस्थ जीवन को सुखी-समृद्ध बनाने से लेकर मोक्ष प्राप्त करने तक का ज्ञान-विज्ञान देने वाले ऋषि दयानन्द ने जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा, जहाँ वे मानवता का मार्गदर्शन करते हुए न दिखें। सब जानते हैं कि महर्षि दयानन्द का सर्वाधिक प्रिय मन्त्र-

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।। था। इस मन्त्र एक ही मूल स्वर है कि परमात्मा हमारे सब दोषों-दुखों को दूर करके हमें सम्पूर्ण भद्रों कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थों से युक्त करे। कभी हमने विचार किया कि महर्षि का यह मन्त्र इतना प्रिय क्यों था? यह प्रश्न उठाना कि क्या अन्य मन्त्र ऋषि को कम प्रिय थे? औचित्य शून्य है। यह एक ही मन्त्र ऐसा है जो सरलता और सफलतापूर्वक सच्च आर्य बनने-बनाने की ऐसी सीख देता है, जो सब मनुष्यों की समक्ष में सहजता से आ सकती है। '**सुखार्था हि सर्व भूतानां अतः सर्वप्रवृत्त**' के अनुसार सब प्राणियों की सहज स्वाभाविक इच्छा सुख पाने की है। सुख पाने की इच्छा में दुःखों से बचने की इच्छा अन्तर्निहित है। यह मन्त्र सब मनुष्यों के लिए सहज भाव से वह रास्ता दिखाता है, जिस पर चलकर हम दुःखों से बचे रहकर सुखों को प्राप्त कर सकते हैं। दुःख मिश्रित सुख हमें नहीं चाहिए तो दुःखों को मूल कारण- हमारे दुर्गुण और दुर्व्यसन है, उन्हें दूर करना पड़ेगा। जीवन में दुर्गुण-दुर्व्यसन रहेंगे तो दुःख-दुर्गति से बचे रहना सम्भव नहीं। हम सुख पाना चाहते हैं तो समझ ले कि जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है, वे ही सुखों के मूल कारण हैं। धैर्य, दर्शन और संस्कृति के अन्य सिद्धान्तों और रहस्यों को न समझ पाने वाले अशिक्षित-अज्ञानी व्यक्ति भी इतना तो सहज भाव से जान और मान ही सकते हैं कि दोषों, दुर्गुणों के प्रभाव में होने वाले दुष्कर्म ही हमारे दुःखों के मूल कारण हैं। दूसरी ओर कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव ही हमारे सुखों के आधार हैं, क्योंकि यह संसार में व्यावहारिक रूप से चरितार्थ होता स्पष्ट दिखता है। व्यावहारिक सीख को भी न स्वीकारना तो पशुपना है। मननशील मनुष्य के लिए तो अपने व दूसरों के अनुभव में मननशीलता का यह गुण न हो, उसके लिए सब शिक्षा, सब उपदेश, सब शास्त्र शून्य ही है।

इस मन्त्र की ओर सबका ध्यान आकर्षित करने के पीछे महर्षि का एक ही उद्देश्य माना जा सकता है कि वे अपने अनुयायी प्रत्येक आर्य के जीवन में इसे चरितार्थ होते देखना चाहते हैं। इनकी महती इच्छा थी कि सब आर्य, सब देशवासी और सब मनुष्य अपने जीवन के दोषों, दुर्गुणों, दुर्व्यसनों को दूर करते हुए समस्त कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थों को प्राप्त करने में प्रबल पुरुषार्थ करें। आर्यसमाज की स्थापना में भी उनकी यही इच्छा प्रतिफलित होती दिखती है। '**आर्य ईश्वर पुत्रः**' के अनुसार ईश्वर की वेदाज्ञा का पालन करने वाले ही ईश्वर के सर्वाधिक प्रिय पुत्र हैं। '**अहम्**

भूमिमददाम आर्यम' के अनुसार परमात्मा ने यह भूमि आर्यों के लिए ही दी है। जब तक हम गुण, कर्म, स्वभाव से आर्य थे, तब हम भूगोल भर के चक्रवर्ती सम्राट् थे। जब हम वेद विद्या से विमुख होकर मनमानी करने लगे तो–

'घर की कलह हमें ले डूबी, महाभारत का युद्ध हुआ था।
इसी युद्ध के कारण हमसे, विश्व-विधाता क्रुद्ध हुआ था।'

यजुर्वेद-२२३ का भाष्य करते हुए ऋषि दयानन्द लिखते हैं–

''मनुष्य ईश्वर के करने-कराने व आज्ञा देने योग्य व्यवहार को छोड़ देते हैं, वो सब सुखों से हीन होकर दुष्ट मनुष्यों से पीड़ा पाकर सब प्रकार दु:खी रहते हैं, जो ईश्वर का पालन करता है, वह सुखों से युक्त होने योग्य है और जो छोड़ देता है, वह राक्षस हो जाता है।'' ऋषि दयानन्द ईश्वर की आज्ञा और उसकी कर्मफल व्यवस्था को हमसे कहीं बहुत अधिक गहराई और व्यापकता से जानते थे। ईश्वराज्ञा के पालन उल्लंघन के अच्छे-बुरे परिणामों को लेकर उनका विश्वास अटल-अड़िंग था। इसीलिए ऋषिवर ने वेद को सब सत्यविद्याओं का पुस्तक बताते हुए वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना धर्म ही नहीं परम् धर्म घोषित किया। हमने महर्षि दयानन्द के जीवन-दर्शन को गहराई से जानने-समझने का प्रयास तक नहीं किया। ऐसे में उनकी मूल्यवान् शिक्षाएँ, उनके स्वप्न और उनकी आकाक्षाएँ हमारी बौद्धिक सोच से परे ही रह गईं।

आर्यो! आज हम सब अपने-अपने ढंग से महर्षि दयानन्द सरस्वती का दो सौ वाँ जन्म वर्ष मना रहे हैं। यह एक दुर्लभ अवसर है। हम तनिक अपने विवेक से काम लें, अपनी संकल्प शक्ति को जगायें। हम अनुभव करें कि ऋषिवर अपनी सम्पूर्ण शिक्षाओं, उपदेशों और जीवन मूल्यों से परमात्मा की वेदवाणी को सब भारतवासियों के ही नहीं, मानव मात्र के मन-मस्तिष्क में प्रतिष्ठित कर देना चाहते थे। वेदविद्या को जनमन में गुंजित हर कण्ठ से उद्घोषित कराकर वे इस धराधाम पर अपनी सनातन संस्कृति को पुनर्जीवित होते देखना चाहते हैं। वैदिक युग के स्वप्न दृष्टा महर्षि दयानन्द ने अपना तन-मन-धन और जीवन का हर क्षण केवल इसी पुण्य प्रयास में लगा दिया। ऋषिवर ने वेद विद्या का उपदेश-सन्देश ही नहीं दिया, स्वयं इसका पालन करके हमारे सामने प्रकट कर दिया कि ये शिक्षाएँ कहने-सुनने के लिये ही नहीं जीवन जीने के लिए है। प्राय: हम आर्यजन यह सोच कर डर जाते हैं कि महर्षि ने तो जीवनभर भयंकर वैर-विरोध और घात-प्रतिघातों को सहा था। उन्हें विषपान भी करना पड़ा। अपमान भी सहन करना पड़ा। हम इतना कुछ सहन नहीं कर पायेंगे। यह एक भूल है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि यह सब करने से पहले ऋषि ने अनेक प्रकार की विषम परिस्थितियों का सामना किया। गुरु यह रहकर तपश्चर्या की। योगाभ्यासपूर्वक सन्ध्योपासना की। इन सबके फलस्वरूप उनको जो प्रखर प्रज्ञा और प्रबल आत्मबल मिला, उसके बल पर उन्होंने संसार के हर संकट को सहज भाव से सहन किया। तप की महिमा बताते हुए योगदर्शन में आता है–

'कामेन्द्रिय सिद्धिऽशुद्धि क्षमात्तपस: (२.४३)'

अर्थात् शरीर और इन्द्रियों की अशुद्धियों को दूर कर इनकी सिद्धि अर्थात् साधना के लिए उपयोगी बनाने के लिए तप किया जाता है। तप का फल बताते हुए लिखा है–

'तपति दु:खी भवति,
तप्यते समर्थो वा भवति येन तत् तप:'

अर्थात् तप करने वाला व्यक्ति प्रथम दु३ख का अनुभव करता है। तप के रूप में स्वेच्छा से स्वीकार किया गया दु:ख तपस्वी व्यक्ति को मोक्ष-प्राप्ति पर्यन्त जीवन में आने वाले दु:खों को सहन करने में समर्थ बनाता है। बंगाल के विद्वान् शरतचन्द्र ने कहा है कि परोपकार के लिए स्वेच्छा से भोगे गये कष्टों को ऐश्वर्य

की तरह भोगा जाता है। क्या घर-परिवार में रहकर हम दु:खों: कष्टों से सर्वथा मुक्त हैं। परिवार के आठ-दस सदस्यों के लिए दु:ख भोगना तो स्वीकार है, मगर समाज के असंख्य लोगों के हित लाभ के लिए दु:ख भोगना स्वीकार नहीं, यह तो क्षुद्रबुद्धि ही कही जाएगी। लोग कहते हैं कि हम दयानन्द, श्रद्धानन्द जैसे नहीं बन सकते। क्या हैदराबाद का सत्याग्रह दयानन्द, श्रद्धानन्द ने किया था? क्या जाति प्रथा मिटाने के लिए सामाजिक बहिष्कार दयानन्द, श्रद्धानन्द का ही हुआ था। सन् १८९५-९६ में मध्य भारत का अकाल हो या १८९९ का राजस्थान का अकाल। १९०५ में कांगड़ा में आने वाला भूकम्प हो या १९०७-०८ का अवध का अकाल- इन सब में हमारे आपके जैसे आर्यों ने ही मानवता की सेवा का कीर्तिमान स्थापित किया था। अवध के अकाल से निपटे ही थे कि आर्यों के सामने मुल्तान की प्लेग की चुनौती आ गई। आर्यों ने साहस और सौजन्यता का एक न टूटने वाला विश्व कीर्तिमान बनाया। हमारे वृद्ध उपदेशक पं. रुलियाराम जी ने पीड़ा से तड़पते प्लेग रोगी के फोड़े के मवाद को मुंह से चूसकर बाहर थूका। सन् १९११ में रावलपिण्डी में पुन: प्लेग फैला तब भी दयानन्द के वीर सैनिकों ने आगे आकर सेवा की। केरल के मालाबार में मोपालाओं द्वारा किया गया जघन्य सामूहिक हत्याकाण्ड व धर्मान्तरण आर्यों की सेवा और सहनशीलता का अनूठा उदाहरण है। तब हमारे कई आर्यों को मुस्लिम वेश में जाकर सेवा करने जैसी कड़ी परीक्षा देनी पड़ी। इसके बाद जुलाई १९२४ में केरल के बड़े क्षेत्र में बाढ़ आ गई, तब भी आर्यो ने शिविर लगाकर जान जोखिम में डालकर सेवा की। यह सब स्वामी दयानन्द, श्रद्धानन्द ने नहीं किया।

आर्यो के तप-त्याग, बलिदान और सेवाभाव का एक लम्बा और गौरवशाली इतिहास है। हमने पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना क्या छोड़ अपने धर्म, दर्शन और इतिहास के प्रेरक व शक्तिदायक स्रोत से ही कट गये। हमें नहीं पता कि आर्य हो जाने के कारण स्वामी श्रद्धानन्द जी के साले लाला देवराज को अपनी पैतृक सम्पत्ति से वंचित होना पड़ा। नगीना के नत्थसिंह को घर से निकाल दिया था। आर्य चिरंजीवलाला को ऐसा सामाजिक बहिष्कार हुआ कि उनकी माता जी के निधन पर उनकी अर्थी को कन्धा देने वाले भी नहीं मिले। ऐसे-ऐसे हृदय विदारक दु:ख हमारे पूर्ववर्ती आर्यों ने जिस धैर्य, आत्मबल और ईशकृपा से सहर्ष सहन किये, विश्वास करो कि परोपकार के लिए कष्ट दु:ख उठाने वालों को परमात्मा धैर्य और आत्मबल परमात्मा अवश्य देता है। आवश्यकता इस बात की है कि हम ईश्वर पर भरोसा करना सीखें। श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी की 'रक्त रंजित है कहानी' और 'तड़प वाले तड़पाती हैं जिनकी कहानी' पढ़कर देखो कि ईश्वर विश्वासी आर्यो ने वैदिक धर्म की रक्षा और परोपकार के लिए क्या-क्या नहीं किया? ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि जो व्यक्ति जितना परोपकार करता है, उस पर परमात्मा की उतनी ही कृपा होती है। जो ईश्वर की कृपा चाहते हैं, वे महर्षि दयानन्द के वैदिक युग लाने के स्वप्न को साकार करने के लिए समर्पित होकर काम करें। हमारा यह पुण्य प्रयास हमारे आगामी जन्मों में हमारे जीवन की रक्षा करेगा। एक कवि ने लिखा है-

'वने रणे शत्रु जलाग्निमध्ये,
महार्णवे पर्वत मस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितिं वा,
रक्षन्ति पुण्यानि पुरा कृतानि।।'

अर्थात् आप चाहे भयंकरवन में हो या भीषण युद्ध में, शत्रुओं के बीच घिरे हों या जल और अग्नि में फँसे हों। महासागर में हो या पर्वत शिखर पर प्रगाढ़ निद्रा में हो या मदहोशी जैसी किसी भी विषम स्थिति में। ध्यान रखो ऐसे में आपके हमारे पूर्वकाल में किये गये पुण्य कार्य ही रक्षा करते हैं। आर्यों! ऋषि के पुण्य प्रयास को पूर्ण करने का पुण्य कमा लो।

स्वामी दयानंद की दृष्टि में समाज का दर्पण ??

-डॉ श्वेत केतु शर्मा बरेली

स्वामी दयानद सरस्वती को पुनर्जागरण, युगप्रवर्तक व इस युग का महान् साहित्यकार व सामाज का दर्पण कहा जाता है, जिन्होंने समाजिक साहित्य के अपूर्णीय अपूर्व ज्ञान वेदों को समाज के प्रत्येक वर्ग व क्षेत्र में पहुंचाने का श्रैष्ठतम् कार्य किया था उसमें उनके द्वारा रचित 'सत्यार्थ प्रकाश' और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका व १५ और लिखित पुस्तकें जो हिन्दी भाषा में लिखी गई थी आदि सामाज को संदेश देती है कि ''वेदों की और लौटो'' और भारत की सनातन प्रभुता संस्कृति सभ्यता विचारधारा को समझने की आवश्यकता है। स्वामी दयानन्द की दृष्टि में समाज का दर्पण सनातन संस्कृति सभ्यता विचारधारा के विपरित पाखंडवाद, अन्धविश्वास, कुरीतियां दूर करने व समाज की दशा सुधारने व दिशा देने का सामाजिक कार्य किया गया था। मानवीय मूल्यों को स्थापित करने हेतु समाज को कुरीतियों से दूर रहने का संदेश दिया था, धर्म सुधार के लिए उन्होंने वेदों को पढ़ने-पढ़ाने की साहित्यिक सचेतना प्रदान की थी। शुद्धि आन्दोलन और एंग्लो-वैदिक शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना करके एक सड़े-गले समाज को अभिनव राष्ट्रवाद और धर्म सुधार के लिये तैयार किया था। यही उनका सामाजिक साहित्यिक दर्पण था, इसलिए स्वामी दयानन्द को सामाज का दर्पण है और कहा जाता है।

स्वामी दयानन्द का मानना था कि वेदों के माध्यम से कर्त्तव्य को धार्मिक परिधि से कहीं अधिक व्यापक हैं। उन्होंने कहा कि व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य लोगों के शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिये कार्य करना होना चाहिये। उन्होंने व्यक्तिगत उत्थान के स्थान पर सामाजिक-सामूहिक उत्थान को अधिक महत्त्व दिया और कहा कि 'वेद सर्व सत्य विद्याओं की पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सभी आर्यों (समाज के श्रेष्ठ जनों) का परम धर्म है।' स्वामी दयानन्द ने कहा कि सामाजिक कल्याण और सामूहिक उत्थान तभी सम्भव है जब व्यक्ति में सेवा और त्याग व परोपकार की भावना हो। धर्म-कर्म के बाह्य आचारों का स्वामी दयानन्द द्वारा विरोध किया गया था और समाज को वैज्ञानिक मस्तिष्क बनाने का प्रयास करके, इसे सामाजिक साहित्यिक सांस्कृतिक दर्पण के रूप में प्रस्तुत किया था। देश में फैल रहे किसी भी सम्प्रदाय की रूढ़िवादिता का विरोध करते हुए उन्होंने बहुदेववाद, पशुबलि, बाल विवाह, अवैदिक कर्मकांडों व अंधविश्वासों का विरोध करके सामाजिक चेतना के वेदों के चिन्तन को सामाजिक साहित्यिक दर्पण के रूप में विकसित किया था। स्वामी दयानन्द जी का सामाजिक साहित्यिक दर्पण ज्ञान के आधार पर इन क्रियाओं को सम्पादित किया गया है, जो समाज भ्रम युक्त था उसको उन्होंने ज्ञान के स्रोत के रूप में वेदों को स्थापित किया तथा समाज को वेदों के साहित्यिक धार्मिक पहलुओं को समाज के सामने अकाट्य प्रमाणों के रूप में विकसित किया था, यही उनका सामाज का दर्पण था, स्वामी जी लिखा है 'सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिए।' यह वाक्य ही उनका समाज का दर्पण को परिपूर्ण करता है।

स्वामी दयानन्द जी के सामाज के दर्पण का मूल था कि वेदों की व्याख्या मानव-विवेक द्वारा होनी चाहिये क्योंकि मानव द्वारा व्याख्यापित समुचित शिक्षा के प्रसार द्वारा ही समाज में अज्ञान और भ्रांति को दूर कर मानव-विवेक को विकास किया जा सकता है। स्वामी दयानन्द जी ने शिक्षा को सामाज के दर्पण के रूप में प्रस्तुत ही नहीं किया, अपितु लाखों की संख्या में देश-विदेश में शिक्षण संस्थानों को विकसित करके साहित्यिक व

सामाजिक दर्पण भी बनाया, जिसके माध्यम है लाखों साहित्यकारों का उदय प्रारम्भ हो गया जिन्होंने समाज को सनातन वैदिक चिन्तन व वाड्गमय से साहित्यिक मार्गदर्शन का दर्पण दिखाया जो आज प्रत्यक्ष में देखा जा सकता है।

स्वामी दयानन्द जी के सामाजिक दर्पण का उद्देश्य सिर्फ विज्ञान और समाजशास्त्र जैसे विषयों का अध्ययन ही नहीं था बल्कि नैतिकता–चरित्र निर्माण, सेवा भाव, परोपकार और सामाजिक कर्तव्य निष्ठा का विकास करना भी था, जिसमें स्वामी दयानन्द काफी सफल हुए तथा ६० से अधिक देशों में व देश में सैकड़ों बालक–बालिकाओं के गुरुकुल व शिक्षण संस्थायें, ५० विश्वविद्यालय सामाजिक दर्पण के रूप में सफलता की सरणियों कर अग्रसर हो रहीं हैं । उनके द्वारा शिक्षा को जनहितकारी गतिविधियों के साथ संयोजित किया गया था जो समाज का दर्पण बना। इसलिए स्वामी दयानन्द इस युग के महान साहित्यकार के रूप में विख्यात हुये थे। यही उनका समाज का दर्पण है।

दयानन्द सरस्वती का योगदान एक विचारक और सुधारक दोनों ही रूपों में साहित्यिक सामाजिक दर्पण के सहज प्रेरणा का स्रोत है। उन्होंने सक्रिय रूप से समाज सुधार के आन्दोलन चलाए, आर्य कन्या पाठशालाओं का जाल फैलाया , महिलाओं को वेद पढ़ने का अधिकार प्रदान किया था और वेदों के द्वारा राष्ट्रीय जागरण का बिगुल बजाकर विश्व भर में साहित्यकार के रूप में सामाजिक दर्पण को स्थापित किया ।

स्वामी दयानन्द का मानना था कि कर्त्तव्य धार्मिक परिधि से कहीं अधिक व्यापक हैं। उन्होंने कहा कि व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य लोगों के शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक कल्याण के लिये कार्य करना होना चाहिये। उन्होंने व्यक्तिगत उत्थान के स्थान पर सामूहिक उत्थान को अधिक महत्त्व दिया था, इसलिए स्वामी दयानन्द सरस्वती इस युग के सामाजिक दर्पण के रूप में माना गया है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के सामाजिक विचारों में प्रमुख यह है कि वे समाज को सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों एवं कुप्रथाओं से मुक्त कराना चाहते थे । वे यह मानते थे कि समाज में कुरीतियों एवं सामाजिक बुराइयों, धार्मिक अंधविश्वासों में डूबा हुआ है । इसे उन बुराइयों से मुक्त करने की आवश्यकता है और सनातन संस्कृति सभ्यता विचारधारा से ओतप्रोत करने की आवश्यकता है। यही उनके सामाज का दर्पण है ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती समाज सुधारक ही नहीं एक उच्च कोटि के वैदुष्य से ओतप्रोत महान साहित्यकार भी थे। सामाजिक दर्पण इसलिए भी कहे जाते थे साहित्य समाज का दर्पण होता है इसलिए उन्होंने समाज के लिए १३७ धार्मिक, सामाजिक, व्यवहारिक समाज को दिशा देने वाली पुस्तकें अपनी जीवन काल में लिखीं थीं, जो आज भी समाज का दर्पण है। प्रारम्भिक पुस्तकें संस्कृत में थीं, किन्तु समय के साथ उन्होंने कई पुस्तकों को हिंदी में भी लिखा था, क्योंकि स्वामी जी ने परतन्त्र भारत में सर्वप्रथम हिन्दी को राष्ट्रभाषा जनभाषा बनाने की आवाज ही नहीं चढ़ाई थी अपितु बहुत विशाल आन्दोलन का स्वरूप प्रदान किया था जिसके कारण आज विश्वभर में हिन्दी भाषा को स्थान प्राप्त हो रहा है। हिन्दी भाषा की आवश्यकता उस समय संस्कृत से कहीं अधिक थी। हिन्दी को उन्होंने 'आर्यभाषा' का नाम दिया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती की मुख्य कृतियाँ निम्नलिखित हैं:– जो उपलब्ध है –

(१) सत्यार्थ प्रकाश (२) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (३) ऋग्वेद भाष्य (४)यजुर्वेद भाष्य (५) चतुर्वेद विषय सूची (६) संस्कारविधि (७) पंचमहायज्ञविधि (८) आर्याभिविनय (९) गोकरुणानिधि (१०) आर्योद्देश्यरत्नमाला (११) भ्रान्तिनिवारण (१२) अष्टाध्यायीभाष्य (१३) वेदांगप्रकाश (१४) संस्कृतवाक्यप्रबोध (१५) व्यवहारभानु आदि है। यह

साहित्य समाज के दर्पण बनी है। इन पुस्तकों में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने १८७३ में आर्योद्देश्यरत्नमाला नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी, जिसमें स्वामी जी ने एक सौ शब्दों की परिभाषा वर्णित की है। इनमें से कई शब्द आम बोलचाल में आते हैं पर उनके अर्थ रूढ हो गए हैं, उदाहरण के लिए ईश्वर, धर्म, कर्म, समाज, राष्ट्र, परिवार, मानवीय मूल्यों को प्रशस्त करने का मार्ग आदि। इनको परिभाषित करके इनकी व्याख्या इस पुस्तक में है।

१८८१ में स्वामी दयानन्द ने गोकरुणानिधि नामक पुस्तक प्रकाशित की जो कि गोरक्षा आन्दोलन को स्थापित करने में प्रमुख भूमिका निभाने का श्रेय भी लेती है। इस पुस्तक में उन्होंने सभी समुदाय के लोगों को अपने प्रतिनिधि सहित गोकृष्यादि रक्षा समिति की सदस्यता लेने को कहा है जिसका उद्देश्य पशु व कृषि की रक्षा है। आधुनिक पर्यावरणवादियों के समान यहाँ विचार व्यक्ति किए गए हैं। इस पुस्तक में समीक्षा, नियम व उपनियम हैं, तथा प्रमुखत: पशुओं को न मार कर उनका पालन करने में होने वाले लाभ वर्णित किए गए हैं। यही स्वामी दयानन्द का सामाजिक दर्पण था।

१८८० में व्यवहारभानु पुस्तक प्रकाशित की गई थी। इसमें धर्मोक्त और उचित व्यवहार के बारे में वर्णन है।

स्वामी दयानन्द जी ने हिन्दी व संस्कृत टंभाषा के समुचित ज्ञान के लिए संस्कृत वाक्य प्रबोध: लिखी, यह संस्कृत व हिंदी सिखाने वाली लघु वार्तालाप पुस्तिका है। विभिन्न विषयों पर लघु वाक्य संस्कृत में दिये गये हैं। उनके अर्थ भी हिन्दी में दिए हैं। इसके अतिरिक्त स्वामी दयानन्द ने महानतम ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वेदों का भाष्य व सामाजिक संस्कारों के लिए संस्कार विधि, आर्यपर्वपद्धिती, गो करूणानिधि आदि ने सामाजिक व सांस्कृतिक व साहित्यिक क्षेत्र में तहलका मचा दिया था जो आज भी सामाज में व्याप्त है।

इस प्रकार हिन्दी साहित्यकारों में स्वामी दयानन्द सरस्वती सर्वोच्च शिखर पर थे जिन्होंने समाज के लिए हिन्दी साहित्य के माध्यम से जितना कार्य किया जो समाज के हर वर्ग में प्रतिष्ठित हुआ है, इसलिए 'महान साहित्यकार महर्षि अरविंद घोष' ने स्वामी दयानन्द सरस्वती के विषय में लिखा है कि जैसे संसार की चोटियों में सर्वोच्च चोटी हिमालय है उसी प्रकार साहित्यकारों-साहित्य से समाज सुधारकों-मानवीय मूल्यों को साहित्यिक सचेतना से परिपूर्ण करने में युग प्रवर्तक सनातन के पुनर्जागरण स्वामी दयानन्द सरस्वती हिमालय की चोटी के समान सर्वोच्च शिखर पर स्थापित थे। यही स्वामी दयानन्द सरस्वती के समाज का दर्पण है ।

पूर्व सदस्य हिन्दी सलाहकार समिति भारत सरकार
संयोजक -वेद प्रचार मन्डल बरेली

सत्यार्थप्रकाश

सत्यार्थप्रकाश धार्मिक ज्ञान का भण्डार, विद्या सम्बन्धी खोज का कोष, वैदिक धर्म का जंगी मैगज़ीन है। जिसने एक बार इसे पूर्णतया समझकर पढ़ लिया, फिर सम्भव नहीं कि वह कभी वैदिक धर्म से दूर हटे। हम दावे से कह सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क को सत्यार्थप्रकाश बहुत-सी नवीन बातें दिखलाता है।

सत्यार्थप्रकाश मतमतान्तरों की अविद्या में सोये हुए पुस्तकों को जगाने का काम देता हुआ उनको मतमतान्तरों के आलस्य का त्याग कराकर वेद सूर्य के दर्शन के लिए पुरुषार्थी बना देता है।

सत्यार्थप्रकाश उस मनुष्य के समान है जो एक हाथ में ओषधि की बोतल और दूसरे हाथ में रोगी के लिए आरोग्यदायक भोजन लिये खड़ा हो।

-आर्यपथिक पं. लेखराम जी

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर महर्षि दयानन्द सरस्वती की २००वीं जन्म-जयन्ती शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में ५० प्रतिशत की छुट

पुस्तक का नाम	वास्तविक मूल्य रुपये
विवाह पद्धति	२०
शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण	०२
वेदान्तिध्वान्त निवारण	०२
समाधी	१००
सामवेद शतक	३०
जिज्ञासा विमर्श	१००
इतिहास प्रदूषण	१००
इतिहास साक्षी	५०
वेदामृत	५०
सत्यासत्य निर्णय	२५
The Book of Prayer	35
Kashi Debate	20
A Critique of Swami Naryan Seet	20
An Examination of Vallabh Seet	20
Five Great Rituals of The Day	20
Bhramaccheden	25
Bhranti Nivarana	35
Atmakatha	20
Gokarunanidhi	12
Dayanand Interparetation of Vedas	05
संध्या सुरभि कलेण्डर	३५
महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ कलेण्डर	२५
The Pre Islamic Religious of Arabia	20
वेदमाता	१००
शंका समाधान	७०
ईश्वर	१५०
नवयुग की आहट	६०
वैदिक इस्लाम	१०
पं. आत्माराम अमृतसरी	१००
इतिहास बोल पड़ा	१००
मृत्यु सूक्त	२००
सत्यार्थ सुधा	१५०

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-

दूरभाष-0145-2460120,चलभाष- 7878303382

धैर्य धर्म का पहला लक्षण...

- डॉ. रामवीर

धैर्य धर्म का पहला लक्षण
भव सागर से पार उतारे,
धैर्यहीनता है दुर्बलता
सुधीजन मन से इसे बिसारें।

आशाओं का आंचल थामे
चलते जाओ धीरे धीरे,
धीरज अगर नहीं खोया तो
लग जाएगी नाव किनारे।

धीरज में शक्ति होती है
जीतता है जो धीरज धारे,
धैर्यहीन सबल हो कर भी
जीवनरण में देखे हारे।

धैर्यधनी दृढसंकल्पी जन
होते हैं औरों से न्यारे,
देश और जाति की उन्नति
होती है उनके ही सहारे।

जब कोई संकट आता है
धीर वीर ही उससे तारे,
याद करो गुरु गोविन्दसिंह के
कितने बहादुर थे पंच प्यारे।

मुट्ठी भर वीरों ने रण में
अगणित शत्रु सैनिक मारे,
बडे बडे उद्धत शासक भी
बना दिए अवनत बेचारे।

धैर्यधनी नरशार्दूलों ने
लडे और जीते रण सारे,
रचे गए हैं महाकाव्य उन
धीर वीर नृपतियों बारे।

86, सै.46 फरीदाबाद (हरि.)
चल. 9911268186

आचार्य की आवश्यकता

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल एवं उपदेशक विद्यालय हेतु संस्कृत व्याकरण, उपनिषद्, दर्शन, संस्कृत साहित्य एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के ग्रन्थों/सिद्धान्तों का अध्यापन करा सके। ऐसे सुयोग्य वैदिक विद्वान्/आचार्य की आवश्यकता है। इच्छुक व्यक्ति निम्न दूरभाषों पर सम्पर्क करें।

ओम्मुनि
प्रधान
९९५०९९९६७९

कन्हैयालाल आर्य
मन्त्री
९९१११९७०७३

महर्षि दयानन्द की २००वीं जयन्ती के अवसर पर आयोजित दुकान (स्टॉल) आवंटन

प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १८, १९ व २० अक्टूबर (शुक्रवार, शनिवार व रविवार) २०२४ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्यजगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की दुकान लगती हैं। इस वर्ष से स्टॉल किराया २०००=०० रूपये प्रति स्टॉल किया गया है। खुले में या अपनी इच्छानुसार स्टॉल लगाना निषिद्ध रहेगा। आप अपना पूर्ण सहयोग देकर इस कार्य में सहयोग करावें। जिन महानुभावों की पहले राशि जमा होगी उस क्रम से स्टॉल का निर्धारण होगा। ऋषि मेला-२०२४ हेतु दुकान (स्टॉल) आवंटन में तीन आधार रहेंगे- १- आर्य धार्मिक पुस्तक, २- हवन सामग्री, ओ३म् ध्वज आदि, ३- दवाईयाँ। आपको जितनी स्टॉल की आश्यकता है उसी अनुरूप राशि बैंक ड्रॉफ्ट या नगद या ऑनलाइन जमा करावें।

स्टॉल सुविधा:- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**- ७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- १. स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक को राशि की रसीद दिखाकर स्टॉल संख्या प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित की जायेगी। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोट:**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

सम्पर्क-देवमुनि/भूदेव उपाध्याय-७७४२२२९३२७

परमहंस परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के २००वीं जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में

भव्य एवं दिव्य ऋषि मेला समारोह

कार्तिक कृष्ण १ से तृतीया सम्वत् २०८१ तदनुसार १८, १९, २० अक्टूबर २०२४

विराट् व्यक्तित्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की एकमात्र उत्तराधिकारिणी संस्था परोपकारिणी सभा, अजमेर एक भव्य एवं दिव्य समारोह का आयोजन कर रही है। इस अवसर पर कई सम्मेलनों (यथा गोरक्षा सम्मेलन, वेद प्रचार सम्मेलन, सोशल मीडिया और आर्यसमाज, स्त्री शिक्षा सम्मेलन, युवा सम्मेलन, गुरुकुल सम्मेलन, राष्ट्र रक्षा सम्मेलन) का आयोजन होगा।

कार्यक्रम स्थल- ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

यजुर्वेद पारायण यज्ञ- का आरम्भ सोमवार १४ अक्टूबर से होगा व इसकी पूर्णाहुति समापन समारोह के अन्तिम दिन २० अक्टूबर को प्रातः १० बजे होगी। इस यज्ञ के ब्रह्मा प्रो. कमलेश कुमार शास्त्री अहमदाबाद होंगे।

विशेष आकर्षण

१. इच्छुक व्यक्तियों को वानप्रस्थ एवं संन्यास की दीक्षा। २. ऋषि के जीवन के ऊपर लेज़र शो।
३. ऋषि दयानन्द के जीवन पर प्रदर्शनियाँ। ४. संगठन का परिचय देने के लिए एक विशाल शोभा यात्रा।
५. वेद-कण्ठस्थीकरण की परीक्षा। ६. ऋषि दयानन्द के जीवन पर विशेष गोष्ठियाँ, नाटिकायें।
७. आर्य साहित्य एवं यज्ञादि के उपकरणों का विक्रय। ८. कार्यकर्त्ताओं तथा विद्वानों का सम्मान।

ऋषि लंगर- इस अवसर पर पधारने वाले श्रद्धालुओं के लिए पौष्टिक एवं स्वादिष्ट प्रातःराश तथा दोनों समय के भोजन की व्यवस्था परोपकारिणी सभा की ओर से होगी।

आवास-व्यवस्था- आप यदि समूह में रहना चाहेंगे तो ऋषि उद्यान तथा इसके अतिरिक्त विभिन्न विद्यालयों, आर्यसमाजों एवं धर्मशालाओं में व्यवस्था की जायेगी। यदि आप अपने लिए अलग से कमरों की व्यवस्था करना चाहते हैं तो निम्न दूरभाषों पर कम से कम १५ दिन पूर्व सूचना दे दें ताकि होटलों में व्यवस्था की जा सके। आप अपने आने के लिए निम्नलिखित दूरभाष पर रजिस्ट्रेशन अवश्य करा लें ताकि आपके आवास में कोई कठिनाई न हो।

सम्पर्क सूत्र- १. श्री रमेशचन्द भाट - 9413356728, २. श्री वासुदेव आर्य-९४६०११२०९२, ३. श्री दिवाकर गुप्ता - 7878303382

आप से निवेदन है कि आप इस अवसर पर अवश्य पधारें। ऐसा अवसर आप के जीवन में दूसरी बार नहीं आयेगा तथा सभी जन अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधारकर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें। महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा व उत्साह प्राप्त कर वेद धर्म के प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

इस महान् पर्व पर आर्यजगत् के अनेक प्रसिद्ध संन्यासी, मुनि, विद्वान्, विदुषी, भजनोपदेशक एवं राजनैतिक जगत् के कई महानुभाव पधार रहे हैं।

संन्यासी- १. स्वामी प्रणवानन्द, गुरुकुल गौतमनगर, देहली २. स्वामी डॉ. देवव्रत, संचालक सार्वदेशिक आर्यवीरदल ३. स्वामी ब्रह्ममुनि, महाराष्ट्र ४. स्वामी ऋतस्पति, गुरुकुल होशंगाबाद ५. स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक ६. स्वामी चिदानन्द सरस्वती, गुरुकुल निगम नीडम्, तेलंगाना ७. स्वामी विदेह योगी, कुरुक्षेत्र ८. स्वामी सच्चिदानन्द, राजस्थान ९. आचार्य विजयपाल, गुरुकुल झज्जर १०. आचार्य ऋषिपाल, गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ।

आमन्त्रित राजनैतिक व्यक्तित्व- १. आचार्य देवव्रत, राज्यपाल गुजरात राज्य २. श्री भजनलाल शर्मा, मुख्यमन्त्री राजस्थान ३. श्री गजेन्द्र सिंह शेखावत, केन्द्रीय संस्कृति मन्त्री ४. श्री वासुदेव देवनानी जी, अध्यक्ष विधानसभा राजस्थान ५. श्री घनश्याम तिवारी, राज्यसभा सांसद ६. श्रीमती अनिता भदेल, विधायक एवं पूर्व मन्त्री, अजमेर।

विद्वान् एवं विदुषी- १. प्रो. कमलेश शास्त्री, अहमदाबाद २. प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब ३. डॉ. रघुवीर

वेदालंकार, दिल्ली ४. डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री, उ.प्र. ५. डॉ. रामप्रकाश वर्णी, एटा ६. डॉ. महेश विद्यालंकार, दिल्ली ७. पद्मश्री आचार्य सुकामा, हरियाणा ८. डॉ. सूर्यादेवी चतुर्वेदा, गुरुकुल शिवगंज ९. डॉ. प्रियम्वदा वेदभारती, नजीबाबाद १०. डॉ. धारणा याज्ञिकी, गुरुकुल शाहजहाँपुर ११. प्रो. नरेश कुमार धीमान, अजमेर १२. आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी, बिजनौर १३. डॉ. विनय विद्यालंकार, उत्तराखण्ड १४. आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक, होशंगाबाद १५. डॉ. कुलबीर छिकारा, सूचना आयुक्त, हरियाणा १६. डॉ. जगदेव विद्यालंकार, रोहतक १७. आचार्य जीववर्धन शास्त्री, जयपुर १८. श्री रामनिवास गुणग्राहक १९. डॉ. रामचन्द्र, कुरुक्षेत्र २०. आचार्य अंकित प्रभाकर, अजमेर।

आर्यनेता- श्री रामनिवास गुणग्राहक, श्री सुरेशचन्द्र आर्य, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा २. श्री प्रकाश आर्य, मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ३. श्री राजीव गुलाटी, चेयरमैन एम.डी.एच. ४. ठाकुर विक्रमसिंह, अध्यक्ष राष्ट्र निर्माण पार्टी ५. श्री धर्मपाल आर्य, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली ६. श्री विनय आर्य, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली ७. श्री देवेन्द्रपाल आर्य, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, उ.प्र. ८. श्री किशनलाल गहलोत, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान ९. डॉ. श्रीगोपाल बाहेती, प्रधान महर्षि दयानन्द निर्वाण स्मारक न्यास, अजमेर १०. श्री जितेन्द्र भाटिया, आर्यवीरदल दिल्ली ११. श्री देशबन्धु आर्य, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा १२. श्री सतीश चढ्ढा, महामन्त्री आर्य केन्द्रीय सभा देहली १३. श्री योगेश मुंजाल, प्रधान टंकारा स्मारक ट्रस्ट १४. श्री अजय सहगल, मन्त्री टंकारा स्मारक ट्रस्ट।

भजनोपदेशक - श्री दिनेश पथिक (पंजाब), श्री भूपेन्द्र सिंह आर्य

सम्पूर्ण कार्यक्रम के स्वागताध्यक्ष के रूप में श्री सुरेन्द्र कुमार आर्य, चेयरमैन, जे. बी. एम. ग्रुप उपस्थित रहेंगे।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा ८० जी के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप आयकर मुक्त होगा। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। सहयोग हेतु निम्न खातों का प्रयोग करें। ऋषि लंगर हेतु आटा, चावल, दाल, चीनी, घी, तेल आदि सामग्री भी प्रदान कर सकते हैं।

खाताधारक का नाम : परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINISABHA AJMER)

बैंक का नाम : भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर, बैंक बचत खाता संख्या : 10158172715

IFSC - SBIN0031588 UPI ID : PROPKARNI@SBI

निवेदक - ओम्मुनि वानप्रस्थी (प्रधान) कन्हैयालाल आर्य (मन्त्री)

डॉ. सुरेन्द्र कुमार- संरक्षक, पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ. वेदपाल-संरक्षक एवं सम्पादक परोपकारी, श्री सज्जनसिंह कोठारी, सभा उपप्रधान, जयपुर, श्री दीनदयाल गुप्त, सभा उपप्रधान, श्री जयसिंह गहलोत, सभा उपप्रधान, जोधपुर, डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा, सभा संयुक्त मन्त्री, अजमेर, श्री लक्ष्मण जिज्ञासु, सभा कोषाध्यक्ष, नोयडा, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि, पुस्तकाध्यक्ष, गुरुकुल झज्जर, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार, अन्तरंग सदस्य, कुरुक्षेत्र, श्री वीरेन्द्र आर्य, अन्तरंग सदस्य, अजमेर।

अन्य ट्रस्टीगण- श्री शत्रुघ्न आर्य, श्री सुभाष नवाल, मुनि सत्यजित्, स्वामी विष्वङ् परिव्राजक, श्री विजयसिंह भाटी, श्रीमती ज्योत्स्ना धर्मवीर, डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी, स्वामी ओमानन्द सरस्वती, डॉ. योगानन्द शास्त्री, श्री सत्यानन्द आर्य।

आयोजक- परोपकारिणी सभा, अजमेर
(महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की एकमात्र उत्तराधिकारिणी संस्था)
दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर, राज.

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं।

आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है।

दूरभाष - **8890316961**

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
ऋग्वेद संहिता	९००	५००	४००
अथर्ववेद संहिता	५५०	४००	३००
ऋग्वेद भाष्य नवम भाग	४००	३००	२२५
पञ्चमहायज्ञ विधि	६२	२०	१५
वैदिक संध्या मीमांसा	१०७	४०	३०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-
पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382

VEDIC PUSTKALAYA
0510800A0198064
1342679A
0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु
खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर
(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)
बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक,
कचहरी रोड, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-
0008000100067176
IFSC - PUNB0000800
UPI ID :
0510800A0198064.mab@pnb

विज्ञप्ति

सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि महर्षि दयानंद सरस्वती की २००वीं जन्म-जयंती शताब्दी समारोह से सम्बन्धित किसी भी प्रकार की जानकारी के लिए कार्यालय समय प्रात: १० से सायं ५ बजे तक सम्पर्क कर सकते हैं।
- कन्हैयालाल आर्य, मंत्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

सम्पर्क -

रमेश चन्द्र आर्य
ऋषि उद्यान कार्यालय
0145-2948698

दिवाकर गुप्ता
परोपकारिणी सभा-कार्यालय
मोबाइल - 7878303382, 8890316961

राज्यपाल हरिभाऊ किसनराव बागड़े 19 अक्टूबर को ऋषि मेले में आएंगे

परोपकारिणी सभा के शिष्ट मण्डल ने की जयपुर में मुलाकात, महर्षि दयानन्द का साहित्य भेंट

परोपकारिणी सभा के शिष्ट मण्डल ने प्रधान ओम् मुनि के नेतृत्व में राजस्थान के राज्यपाल हरिभाऊ किसनराव बागड़े से मुलाकात की । शिष्ट मण्डल ने राज्यपाल को अजमेर में प्रस्तावित महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वि जन्म शताब्दी समारोह (ऋषि मेला) का निमंत्रण दिया। राज्यपाल बागड़े ने सभा का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। वे तीन दिवसीय ऋषि मेले के दूसरे दिन 19 अक्टूबर को मुख्य अतिथि होंगे। इस मौके पर सभा के संयुक्त मन्त्री डॉक्टर दिनेश चन्द्र शर्मा ने राज्यपाल को बताया कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के द्वि जन्म शताब्दी समारोह के सुव्यवस्थित आयोजनों के लिए केन्द्र सरकार ने माननीय प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में समिति गठित कर रखी है। परोपकारिणी सभा के प्रधान भी इसके सदस्य हैं। राज्यपाल ने आयोजन में पूरा सहयोग देने की बात कही। शिष्ट मण्डल में राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री जीववर्धन शास्त्री भी शामिल थे। राज्यपाल बागड़े को इस अवसर पर महर्षि दयानन्द सरस्वती का साहित्य भी भेंट किया गया। परोपकारिणी सभा के प्रधान श्री ओम् मुनि ने उन्हें वैदिक साहित्य के प्रकाशन एवं गुरुकुल आदि से जुड़ी संस्था की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी दी।

इतिहास के हस्ताक्षर

अजमेर में अक्टूबर 1933 में श्रीमद् दयानन्द निर्वाण अर्ध शताब्दी महोत्सव का आयोजन हुआ था। महर्षि के साक्षात् दर्शन करने वाले लोगों का सामूहिक चित्र भी इस मौके पर लिया गया। चित्र में महात्मा नारायण स्वामी, श्री हरविलास शारदा, महात्मा हंसराज, पंडित आर्य मुनि आदि सहित कुल दस लोग दिखाई दे रहे हैं।

आर जे/ए जे/80/2024-2026 तक प्रेषण : २९-३० सितम्बर २०२४ आर.एन.आई. ३९५९/५९

अनन्य ईश्वर भक्त, योगेश्वर

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती की

२००वीं जयन्ती के अवसर पर

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा आयोजित

दिव्य एवं भव्य

ऋषि मेला

१८-२० अक्टूबर २०२४

सादर आमन्त्रण

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,

डाक टिकिट